गौण चरित्र

बोधनः—

पुरानी रूढ़ियों और अन्धविश्वासों में फंसा हुआ पुजारी है राई ग्राम में उसकी धाक है। उसे रूढ़िवादिता, ब्राह्मणों की अखण्ड सत्ता, राजा परमेश्वर का प्रतिनिधि है—में विश्वास है। वर्णाश्रम धर्म को वह श्रेष्ठतम समझता है। अटल और लाखी का अन्तर्जातीय विवाह करा कर वह वर्णाश्रम धर्म को लात नहीं मार सकता। ब्राह्मत्व की श्रेष्ठता पर विश्वास करता है। उसमें कुछ दंभ और जातिगत अभिमान की मात्रा है, शास्त्रार्थ के लिए वह एक दम प्रस्तुत हो जाता है। संक्षेप में, वह निर्भीक, स्वधर्म निष्ठित, मृत्यु से निर्भय, रूढ़िवादी पुजारी है, जो पुरातन धर्म का प्रतिनिधित्व करता है।

विजयजंगमः—

स्वयं कर्मठ और कर्म मार्ग में अटूट विश्वास रखने वाला तर्कवादी उदार आचार्य है। शरीर की कार्य शक्ति पर उसकी आस्था है 'जीवन में काम करना, श्रम से रोटी का उपार्जन करना और शिव का नाम लेना, यही गौरव है। इसी में जीवन की सार्थकता है।' ये उसके आदर्श वाक्य हैं। वह राजा को भी कर्म की सलाह देता है। उसकी प्रमुखता यह है कि वह वर्ण व्यवस्था की कट्टरता नहीं मानता। जहां बोधन अटल-लाखी का विवाह कराने को तैयार नहीं होता, वह सहर्ष विवाह सम्पन्न कराता है। वह शैव है, जीव हिंसा को पाप समझता है, महान् कलाकार और विद्वान है। बोधन और विजय दो विपरीत गुणों वाले ब्राह्मण हैं। बोधन में जहाँ प्राचीनता है विजय नवीन विचारधारा का प्रतीक है। उसका व्यक्तित्व ऐतिहासिक है और वह लिंगायत सम्प्रदाय की विचार धारा में आस्था

रखता है। युद्धों और शिकार में साथ रह कर तथा कला की उपासना के द्वारा वह राजा मानसिंह का हृदय जीत लेता है। वीणा-वादन में आचार्य बैजू से उसकी प्रतिद्विन्द्विता चलती रहती है।

बैजू आचार्य :—

अकबर के दरबारी संगीतज्ञ तानसेन का समकालीन, मानसिंह मृगनयनी के प्रधान गायक गले की मधुरता और वीणा पर अंगुलियों की चतुराई के लिये विख्यात, जाति के ब्राह्मण. गायन वादन बढ़ाने में उसको दिन रात की भूख प्यास अवसर-कुअवसर की परवाह नहीं रहती थी। संगीत के क्षेत्र में विख्यात रहे और इनके सहयोग से राजा मानसिंह की संगीत के प्रति रुचि बढ़ी। स्वभाव से विनम्र और संतोषी वृत्ति के हैं। अन्तमुखी चित्र वृत्तियाँ और अपने क्षेत्र में अप्रतिम है। प्रतिभा और मौलिकता का सम्राट है।

गयासुद्दीन :—

महमूद खिलजी के मरने के पश्चात् उनका पुत्र गयासुद्दीन उत्तराधिकारी हुआ। उसके समय में कालपी हाथ से चली गई, परन्तु फिर से अधिकृति करने की तीव्र इच्छा सदैव उसके मन में रही। उसने मेवाड़ के साथ सन्धि कर ली। वह आशा करता था कि किसी दिन राजपूतों की सहायता से गुजरात और दिल्ली का मुकाबला कर लूंगा। उसका स्वभाव अधीर, उद्धत, कामुक और कपट प्रिय था। मदिरा पीने पर वह सहज स्वाभाविक मानव सा हो जाता था। पीता अधिक नहीं था परन्तु पी लेने पर उसकी मानवीयता, उपेक्षा, हास्य प्रियता तथा कामुकता बढ़ जाती थी। हिंदुओं के साथ वह अत्याचार नहीं करता था। कट्टरता का वह मजाक उड़ाया करता था। इसलिए मुल्ला वर्ग उससे रुष्ट था। कामुकता के अंधेपन में वह पुरुष और स्त्री की पहिचान नहीं रखता

था। वह योग्य शासक था, और राजनीति का उसे अच्छा ज्ञान था। जहर देकर उसे मार डाला गया।

नसीरुद्दीन :—

का पिता की तरह कामी और विलासी पुत्र है। राजनीति, प्रजा के सुख समृद्धि, या देश की उन्नति में उसे दिलचस्पी नहीं है। वह सुरा-सुन्दरियों में रह कर अपनी उद्दाम वासना और काम पिपासा को तृप्त करने को ही सबसे अधिक सुख समझता है। फलतः उसे दिन रात नाच रंग वासना की पूर्ति और अनैतिकता की ओर उन्मुख करता रहता है। कहते हैं मालवा-सुलतान नसीरुद्दीन की १५ हजार बेगमें थी; राज्य इसने पाया था पिता को विष देकर वासनाओं को तृप्त के लिये। लगभग १०० वर्ष पश्चात् जहाँगीर ने इसकी ऐय्याशी, गन्दगी, पाशविकता, का हाल सुना था, तो उसे इतना क्रोध आगया था कि उसने उसकी कब्र तक उखड़वा कर फेंक दी थी। उसका सम्पूर्ण जीवन कामवासना की तृप्ति में गया।

कथोपकथन

मृगनयनी के कथोपकथन उसके पात्रों के चरित्र-चित्रणों में निजी महत्व रखते हैं। वर्माजी ने कथोपकथनों को लिखने में विशेष ध्यान और मनोवैज्ञानिकता का परिचय दिया है। "सहज स्वाभाविकता, रमणीयता और नाटकीयता इनके विशेष गुण हैं। प्रत्येक पात्र की वय, परिस्थिति, स्वभाव, रुचि, मनोभावनाओं की अभिव्यक्ति इन के द्वारा हुई है। कहीं बड़े, कहीं छोटे, कहीं अति संक्षिप्त रख कर वर्मा जी ने नाटकीयता (Dramatic Touch) के स्थल उत्पन्न किए हैं। इन वार्तालापों के अध्ययन से हमें पात्रों के शील गुण स्वभाव का परिचय मिल जाता है। पात्रों के मानसिक विकास के अनुकूल ही भाषा का प्रयोग किया है।

उदाहरण स्वरूप, कुछ स्वाभाविक छोटे कथोपकथन देखिए—

'व्याज समेत पा लिया', लाखी खिलखिलाती हुई बोली, 'तुम्हारे गोरे गालों पर कैसा बैठा है। अहा हा हा !! डिठौना सा लग गया !! अब किसी की नजर नहीं लगने पावेगी !!'

'तुम्हारे एक गाल पर लगने से रह गया है, सो, तुमको किसी की डीठ लग जायेगी !'

'हूँ ! तो लगा दो, नहीं तो अपने हाथ से लगाये लेती हूँ।'

'बाहर चलो, कोई न कोई लगा देगा।'

'कोई कैसे लगा देगा ? जो तुमको लगा सकता है वही तो मुझको लगा सकेगा।'

'भावजें हैं बाहर और कुछ बहिनें।'

'तुम्हारी है कोई ननद ?'

'बुरी दृष्टि'—लाखी हँस पड़ी।

कथोपकथन में सजीवता है। पात्रों में यौवन झलका पड़ता है। स्त्री सुलभ लज्जा, सौकुमार्य, यौवन के प्रभात की उमंगें और ठिठोली स्पष्ट हो जाते हैं। ये कथोपकथन मनोवैज्ञानिक दृष्टि से भी गहरे और सच्चे हैं।

कहीं कहीं पात्र एक-दूसरे के चरित्रों का विश्लेषण करते हैं और उनके स्वभाव, गुण शील, प्रकृति के विषय में जानकारी प्राप्त करा देते हैं:—उदाहरण स्वरूप देखिए:—

उपस्थित जनता ने मानसिंह का जयकार किया। तमाशा देखने वाली स्त्रियों में से एक-दूसरे से कहा: –

'अपना राजा है बहुत अच्छा। बड़ा रसिया है। है न ?'

'रसिया न होता तो उसको हाथी पर कैसे चढ़ा देता। मनचला है, रसभरी। साले को भी हाथी पर चढ़ा लिया ! अच्छा तो रहा !'

'वाई ! रूप-सरूप ने बिठला दिया हाथी पर। क्या सचमुच तुर्कों की सेना को रस्सी और नसैनी पर से जब उतार लाते नगर में ?

'थी तो लाखी ने बहादुरी। इतना तो कहना पड़ेगा।'

'इतनी कि राजा घोड़े पर और वह छोकरी हाथी पर ! हाँ रूप-की सुनाई है उसमें । तुमने जाना या नहीं, जब हाथी पर चढ़ने को आने लगी, तब कैसी आंखी चढ़ाई की राजा पर ?'

'राजा उसको ग्वालियर ले जाकर महलों में डाल लेगा ।'

'राजा जो ठहरा, चाहे जो करे, पर है भला । ठीक समय पर आ गया, नहीं तो नरवर राख हो जाता उसी ने बचाया ।'

—मृगनयनी पृष्ठ २०१

इस कथोपकथन से पाठकों को मानसिंह की रसिकता, शील, प्रजावत्सलता, वीरता, सलहज का आदर तथा लाखारानी का सौन्दर्य, बहादुरी, आत्म त्याग, साहस इत्यादि प्रकट हो जाता है ।

उपन्यास में अनेक स्थानों पर हृदयगत भावनाओं तथा अन्तःकरण में होने वाले मन संघर्ष को मर्मस्पर्शी ढङ्ग से चित्रित किया गया है । इस विधि का प्रयोग कम है, पर पात्रों को सजीव और सच्चाई दिखाने का यही उपाय है । जब निन्नी राजमहलों में आती है, तो उसके मन में पूर्व स्मृतियाँ आती हैं । वह सोचती है:—
'वह मचान, वह चांदनी रात जिसमें लहलहाते हुए अनाज के खेत जैसे किसी बालक के साथ बात करना चाहता हो, सांभर चीतल की चौकियां, बगल में रखा हुआ धनुष-बाण, लाखी की ठिठोली क्या सब सदा के लिए हाथ से छुटक गए ? क्या मैं जा न सकूँगी ? क्या यहीं बन्द होकर रहना पड़ेगा ? महाराज ने वचन दिया था कि परदे में नहीं रहोगी । वह निभायेंगे, अवश्य निभायेंगे । नहर की खुदाई का आरम्भ उन्होंने कितनी जल्दी कर दिया ! पर बाहर भी निकलूंगी तो सवेरे कहाँ जाऊँगी ?'

उपर्युक्त मनः संघर्ष से मृगनयनी के आन्तरिक भावों तथा स्थिति का ज्ञान हो जाता है । सर्वत्र वास्तविकता और स्वाभाविकता की रक्षा का प्रयत्न किया गया है, कृत्रिमता नाम-मात्र को भी नहीं है । शर्माजी की शैली में यथार्थवादी चित्रों को खींचने की शक्ति है । कहीं

कहीं कलात्मकता और सरसता का अपूर्व सम्मिश्रण है, जैसे प्रेम संबन्धी समस्त वार्तालाप बड़े मधुर और हृदय-स्पर्शी बन पड़े हैं। एक प्रसंग देखिये—

'निक्की उससे लिपट गई। लाली ने प्रतिरोध नहीं किया। बोली, 'सचसच बतला तेरे और भय्या के बीच में कभी कुछ ऐसी वैसी बातचीत हुई है न ?'

'लाली ने मुँह छिपाकर कहा, 'ऐसी वैसी क्या बात ?'
'कोई प्यार की बात। जैसी कथा कहानी में सुनते आये हैं।'

'हट !'
'ऐ हें हें ! हट वट नहीं, ठीक ठीक बतला।'
'हमारी तुम्हारी जात में ऐसा होता कैसे हो सकता है ?'
'क्यों नहीं हो सकता है ! भय्या कहते थे हो सकता है।'

इस उपन्यास के कथोपकथनों में कथासूत्र को आगे बढ़ाने और चरित्र की विशेषता दिखलाने के साथ पूर्ण रोचकता, यथार्थता और प्रभावशीलता है। कहीं कहीं भावभङ्गी मूक ढङ्ग के भी कथोपकथन हैं।

प्रो० हरस्वरूप माथुर ने इसके विषय में सत्य ही लिखा है, 'इस उपन्यास में समन्वित-पद्धति पर लिखे गए अनेक कथोपकथन हैं। इसमें कला का जैसा संयमित और निखरा रूप देख पड़ता है, वैसा बहुत कम उपन्यासकारों की कृतियों में दृष्टिगत होता है ··· यह उपन्यासकार की उच्च कोटि की रचना का परिचायक है ··· न तो कृत्रिमता का बोध होता है, न वार्ता के स्वाभाविक प्रवाह में व्याघात पड़ता है।' १

शैली:—

घटनायें :—

उपन्यास घटना प्रधान है। एक के पश्चात् दूसरी, तीसरी, चौथी निरन्तर घटनाएँ हमारे सामने चित्र-पट की तरह आती रहती हैं। प्रारम्भिक आधे भाग में निन्नी तथा लाखी के ग्रामीण संघर्ष के चित्र हैं। इनमें आखेट, होली के खेल और ग्राम्य जीवन की घटनाओं में रोचकता और सजीवता है। अधिकांश घटनाओं में कार्य कारण का सम्बन्ध है। उपन्यासकार ने इतिहास से सम्बन्धित पृष्ठ भूमि ले कर कई घटनाओं को एक साथ उठाया है, पर मूल तथा गौण चरित्रों का इनसे अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है कुछ घटनाओं का समावेश केवल मनोरंजन मात्र के लिये हुआ है, जैसे प्रारम्भिक होली के चित्र, गांव के मन्दिर के दृश्य, आखेट, नट नटनियों के खेल इत्यादि। शैली में सर्वत्र स्पष्टता, बोधगम्यता, रोचकता और पाठक में कहानी में रुचि उत्पन्न करने के गुण हैं।

वर्णन :—

उपन्यास के वर्णनों की अधिकता है। उपन्यासकार ने आखेट, जंगलों, ग्रामीण रीति रिवाजों, होली, फसल कटाई, नटों के खेलों, जंगली जानवरों, युद्धों, महलों के लम्बे-लम्बे सजीव चित्र हैं। पात्रों के हाव-भाव चित्रण करने में मनोवैज्ञानिक शैली अपनाई गई है। वर्मा जी ने पात्रों के बाह्य एवं आन्तरिक मनोभावों का मर्मस्पर्शी वर्णन किया है—जैसे—नट बेड़ियों के एक छोटे से डेरे का वर्णन देखिए :—

"नट बेड़िये दस-पन्द्रह से अधिक न होंगे। पेड़ों की झुरमुट में झुग्गियों के ऊपर घास और पत्तों से कुछ झोंपड़ियां बना रक्खी थीं।

एक बड़ी सी झोंपड़ी में कमरे हो गये, दो भैंसें और बकरियाँ बंधे हुये थे। कुछ कन्दर खूँटियों से, एक झोंपड़ी के किनारे कमठे, तीरों भरे तरकस और लम्बे छुरे रखे हुये थे। छोटे बच्चे घास से ढंकी हुई डलियों में थे। पांच सात अधेड़ और जवान स्त्रियां खाना पकाने में लगी हुई थीं। केश लम्बे थे। पुरुष फटी मैली धोतियां पहिने हुये थे, स्त्रियां मैली गुदड़ोंदार पायजामों में। ओढ़नी कोई नहीं ओढ़े थीं। उरोजों पर केवल चोली कसे हुए। कानों में जस्ते की बालियां और नाक में पीतल के बड़े बड़े नथ। गले में कांच के रंग बिरंगे गुरियों की मालाएँ।'[1]

उपरोक्त वर्णन में लेखक की सूक्ष्म दृष्टि का परिचय मिलता है मनुष्य के विभिन्न कार्यों, छोटी बड़ी विशेषताओं, पोशाकों, रहन-सहन के ढङ्गों को गहराई से देखकर सब कुछ कुशलता से चित्रित कर दिया गया है।

पात्रों के रेखा चित्र

पात्रों के रेखाचित्र बड़ी कुशलता से दो दो तीन तीन पंक्तियों में ही खींचे गए हैं। इन रेखा चित्रों की सबसे बड़ी विशेषता उनकी सजीवता है। चित्रांकन में वर्मा जी को अपूर्व सफलता प्राप्त हुई है। कागज पर उतारे हुये ये चित्र जैसे स्वयं बोल पड़े हैं। उपन्यास में सर्वत्र भावों का स्पन्दन और हृदय की धड़कन है। सजीव शैली में लिखे गये कुछ चित्र देखिये—

“दोनों (लाखी और निन्नी) समवयस्क थीं—आयु लगभग १५ १६ वर्ष, परन्तु निन्नी बलिष्ठ और पुष्ट काया की, लाखी दुबली और छरेरी।”

“राजा मानसिंह युवावस्था के आगे आ चुका था, बड़ी काली आँखें, भरी भौंहें, सीधी लम्बी नाक, चेहरा भरा हुआ कुछ लम्बा।

ठोड़ी दृढ़, होठ सहज मुसकान वाले। सारा शरीर जैसे अनवरत—व्यायाम से तपाया और कसा गया हो। कद लम्बा और छाती चौड़ी, घनी नोंकदार मूछें।"

'अटल हट्टा कट्टा युवक था। मसें भीग चुकी थीं। सिर के बाल लम्बे थे। इसलिये सारी आकृति में भीमता आ गई थी। कई साल के कठोर जंगली जीवन ने उसके लम्बे चेहरे की लम्बी नाक को कुछ और लम्बा कर दिया था।'

'महमूद बघर्रा, साढ़े तीन हाथ से अधिक ऊँचाई का था, परन्तु चौड़ा इतना था कि बौना मालूम होता था''''आयु लगभग पैंतालीस वर्ष की थी। मूछें इतनी लम्बी कि सिर पर उनकी गाँठ बाँधता था और दाढ़ी नाभि के नीचे तक फटकार मारती थी।'

वर्मा जी की लघुदर्शिनी स्केच शिल्प प्रतिभा उपरोक्त उदाहरणों में देखी जा सकती है। उनके उपन्यास ऐसे ऐसे अनेक व्यक्तियों से भरे पड़े हैं किन्तु तीन चार रेखाओं में ही वे अपने पात्र की रूपरेखा स्पष्ट कर देते हैं। अपने पात्रों की विशेषताओं या चरित्र-गत दुर्बलताओं का एक हल्का सा संकेत दे देते हैं। जैसे चित्रकार ब्रश के दो तीन झटकों में रेखाचित्र खींच देता है, उसी प्रकार दो तीन रेखाओं में ही वर्मा जी ने अपने स्केच खींचे हैं। इन चित्रों में आखेट के चित्र बड़े विस्तृत और स्पष्ट बन पड़े हैं। उनमें वर्णित जंगलों को देखकर हम एक प्रकार से बुन्देलखण्ड की जैसे सैर ही कर लेते हैं।

शारीरिक चेष्टाओं की अभिव्यञ्जना

न केवल ऊपरी वर्णन, प्रमुख पात्रों, जानवरों, या प्रकृति की नाना वस्तुओं की चेष्टाओं के वर्णनों में वर्मा जी को बहुत सफलता प्राप्त हुई है। उनके वर्णन गत्यात्मक (Dynamic) हैं। उनमें गति है, प्राण है। वे चलते फिरते, उछलते मचलते मरते फिरते हैं।

क्रियाओं का बाहुल्य है। इन क्रियाओं, चेष्टाओं, अनुभवों के वर्णन में सजीवता और चित्रोपमता (Pictoril effects) है। कुछ शारीरिक चेष्टाओं की सजीवता देखिए:—

'अरे रे रे रे !!!' लाखी ने हँसते हुये होठों पर दोनों हाथ रख लिये और आंखें मूंद लीं। उछल-उछल कर अट्टहास करते हुये निन्नी ने उसे कीचड़ से सान दिया।'

'वे दोनों हँस पड़ी, दोनों के दाँत मोती जैसे, हँसी जैसे शरद-कालीन नदी की निर्मल धारा। आँखों में भलक-हलकपन; अंगों में थिरकन जैसे किसी राग की सच्ची तान हो। धीमी भूम वाले कमल-पल्लवों पर से मृगनयनी की आंख लाखी के वस्त्रालंकारों पर गई—रेशम के वस्त्र, मोती और सोने के गहने। लाखी खिल रही थी।'

'लाखी के नथने फूल गये। श्वास प्रश्वास के वेगों के बीच में छाती उठने गिरने लगी। गले की नसें उभर आईं। आंखों में आंसू आगये।'

हास्य एवं व्यंग्य का सम्मिश्रण

यों तो 'मृगनयनी' में शृंगार एवं वीर रसों का प्राधान्य है किन्तु यत्र तत्र हास्य एवं व्यंग्य का कलात्मक प्रयोग भी किया गया है। यह हास्य कहीं पात्रों के आकार, रहन सहन का ढंग, आदतें, स्वभाव इत्यादि के वर्णन में उत्पन्न किया है। उपन्यास का प्रारम्भिक अंश जिसमें होली की ठिठोली का वर्णन है, हास्य से परिपूर्ण है। एक दृश्य देखिए:—

'आओ, आओ, इसी की कमी रह गई है, सो पोते देती हूं।' निन्नी ने कहा—

लाखी सहमी नहीं। मिन्नी से जा चिपटी। निन्नी ने लाखी के ऊपर वाले हाथ को अपने एक हाथ की मुट्ठी में पकड़ लिया और

दूसरे से गोबर को छीनकर उसके माथे और एक गाल पर मल दिया।

महमूद बघरें का वर्णन हास्य से परिपूर्ण है। उसकी आदतें, स्वभाव, बोलने का ढंग, भोजन करना ऐसी विचित्रताओं से परिपूर्ण है कि पाठक हँसे बिना नहीं रह सकता। उसे आश्चर्य होता है कि क्या ऐसा व्यक्ति का संसार में होना संभव है, जो कलेवा के अलावा दिन भर में गुजराती वजन का एक मन भोजन करता है।

नसीरुद्दीन का जल विहार परिस्थिति जन्य हास्य का अच्छा उदाहरण है! सम्पूर्ण दृश्य को इस ढंग से सजाया गया है कि पाठक पढ़ते पढ़ते नसीर की वासना लोलुपता, मूर्खतापूर्ण आदेशों, हरकतों और अविवेक पर हँसे बिना नहीं रह सकता। एक भाग देखिए:—

'संगीत बन्द करके नसीर बोला, 'पानी में कूद पड़ो और आपस में छुआ-छुअव्वल खेलो। मैं भी पानी में उतरूंगा .....

आदेश—बालिकाओं ने इस फरमान को अविलम्ब जारी किया। जो युवतियां तैरना जानती थीं, वे कपड़ों को उतार संभाल कर पानी में कूद पड़ीं। जो तैरना नहीं जानती थीं, वे घाट पर बैठे बैठे, पानी में कलोलें करती हुईं तमाशा देखने लगीं। नसीरुद्दीन कभी इस समूह कभी उस समूह को बढ़ावा देने लगा।

कुछ स्त्रियाँ तैरती खेलती झील में थोड़ी दूर निकल गईं। थक गईं, डूबने को हुईं और सहायता के लिये चिल्लाने लगीं। पास के समूह की कुछ उनको बचाने के लिए सरपटीं। थकी हुई स्त्रियां उनसे उलझकर अपने और उनके भी प्राणों को संकट में डालने की परिस्थिति में आगईं।

नसीरुद्दीन चिल्लाया,—बचाओ! इनको बचाओ!!
अनेक कण्ठों से ये शब्द निकले।

नसीर हाथ-पैर नचाने लगा, उछला, कूदा, लेकिन पानी में नहीं उतरा। मटरू ने उससे भी अधिक उछल कूद की परन्तु कुछ नहीं।

कनात के पीछे सुल्तान के बहुत से नौकर खड़े थे। उनमें से कई जो तैराक थे, कनात को चीर कर दौड़ पड़े; पानी में कूदे और कुश्तियों को बचाकर किनारे ले आये ······ चाहते थे कि सुल्तान की दृष्टि उन पर पड़ जाय और पुरस्कार प्राप्त करें। सुल्तान की दृष्टि उन पर पड़ी। उसने उन लोगों को अपने निकट बुलाया—

'तुम्हारा नाम ?'

उन लोगों ने अपने अपने नाम बतलाये।

'तुम कनात के भीतर कैसे घुस आये ?

उन लोगों की घिग्घी बँध गई।

'किसने कहा था ? किस के हुक्म से आये ? बोलो !

······ उनमें से एक बोला, 'जहांपनाह ने हुक्म दिया था कि इनको बचाओ।'

'कमबख्तो ! तुमको हुक्म दिया था ?' वह कड़का

नसीर ने आज्ञा दी; 'इनका सिर धड़ से जुदा कर दो जिसकी आंखों ने यह सब देखा; और हाथ भी काट दो।'

ख्वासियों ने उन लोगों को कैद कर लिया। कनात के बाहर लेजाकर उनको मार दिया गया। फटे गले से नसीर बोला; 'ख्वाजा मटरू सब मज़ा किरकिरा हो गया। कोई और शगल सोचो।'

ख्वाजा मटरू के होश फ़ू ँच कर चुके थे।

सरसता

वर्मा जी की शैली की सरसता और माधुर्य प्रेम और संयोग शृंगार के दृश्यों में विशेष रूप से प्रकट हुआ है। इस उपन्यास के प्रेम मय वार्तालापों में शृंगार रस फूट पड़ा है; पढ़कर पाठक को

मन मयूर नृत्य करने लगता है। अटल और लाखी; मानसिंह और निन्नी के प्रेम वर्णन में शृंगार रस का अच्छा निर्वाह हुआ है। एक सरस स्थल को देखिये:—

'मानसिंह भी बैठ गया। मृगनयनी मुसकराने लगी। मानसिंह की गम्भीरता चली गई। मानसिंह बोला, 'तुम सचमुच बड़ी हो। मुझसे बड़ी और बहुत अच्छी।'

'वाह! वाह!!'

'ठीक कहता हूँ।'

'कैसे?'

मानसिंह उसके निकट आने को हुआ। तो मृगनयनी और अधिक मुसकराई।

'और निकट आए तो मैं बहुत छोटी रह जाऊँगी।'

. . . .

मानसिंह बोला, 'तुम्हारी प्रत्येक मुसकान, भिन्न भिन्न समय पर तरह तरह का दिखलाई पड़ने वाला सलोनापन, तुम्हारी छवि का हर एक अंश ऐसा मूर्त कर देना चाहता हूँ इतना साकार कि जीवन के अन्त तक अपने प्रेम का अचल प्रतिबिम्ब बना रह कर दिखलाई पड़ता रहे'—पृष्ठ १८७।

युद्धों तथा आखेटों के वर्णनों में वीर रस का अच्छा निर्वाह हुआ है। लाखी और निन्नी का आखेट मन में साहस, धैर्य और वीरता के भाव उत्पन्न करता है। मानसिंह के युद्ध कौशल, अटल का युद्ध तथा मृगनयनी की लड़ने की उद्दाम इच्छा वीर रस का संचार करते हैं। इन युद्धों के विस्तृत वर्णनों को पढ़कर ऐसा आनन्द आता है मानो पाठक स्वयं युद्ध में भाग ले रहा हो। सिकन्दर और मानसिंह के युद्ध का वर्णन (परिच्छेद ६६) बड़ा विस्तृत और सजीव है। शैली की स्पष्टता, वर्णन की अपूर्व शक्ति, कलात्मक सामर्थ्य और वीर भाव की अभिव्यक्ति बड़ी सफल है। इनके अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं।

अलंकार—

पात्रों के रूप गुण तथा मनोभावनाओं की प्रभावोत्पादक अभिव्यक्ति के लिये वर्मा जी ने अनेक अलंकारों का प्रयोग किया है। उपमाओं का सौन्दर्य देखने योग्य है। इन उपमाओं का प्रयोग इतनी कलात्मकता से किया गया है कि शैली में सरस प्रवाह और सरसता का संचार हो उठा है। अनेक कथोपकथन बड़े चमत्कार पूर्ण हैं। कुछ वाक्य देखिए—

'...गयासुद्दीन का गला भर आया और आँखें गीली हो गईं, ख्वाजा ने समझ लिया कि सुराही की नियामत ने अपनी गोदी में समेट लिया है।'

'इस कम्बख्त बरसात के लिए क्या कहा जाय? यह लो, जोर तेजी से बरस पड़ा! जैसे आसमान में छेद हो गये हों।'

'अपने मन के सलोनेपन के तकाज़े से कैसे लड़ा जाय ये गरीब आप समझे?

'इस कर्त्तव्य की सुधि ने मानसिंह की कला, कल्पना और ओज की ललित मधुरता को धक्का दिया, जैसे किसी ने मान मन्दिर और गूजरी महल के निर्माण को यकायक रोक दिया है, जैसे बैजू बावरे ने किसी मीठी तान को लेते लेते यकायक वीणा को पटक कर फोड़ डाला हो।'

'मानसिंह के नेत्रों से आभा सी बिखर रही थी। वह आभा उन गीली आँखों में समा गई।'

वर्मा जी ने कुछ उपमाएँ बिल्कुल नवीन ढंग की प्रयुक्त की हैं। इनमें हास्य व्यंग्य का पुट है। जैसे बघर्रा से सम्बन्धित उपमाएँ लीजिये—

(१) बघर्रा बोला, जैसे किसी नाले ने प्रवाह के जोर से पानी का फव्वारा छोड़ा हो।'

(२) बबर्रा बोला जैसे जमीन के नीचे से दरार में होकर भूकम्प बोला हो

(३) एक लम्बी डकार ली, जैसे बरसात में कोई कच्चा मकान गिरा हो।

कुछ उत्प्रेक्षाओं के कलात्मक प्रयोग बड़े मर्मस्पर्शी बन पड़े हैं। इनसे मूल भाव के उद्दीपन में बड़ी सहायता मिलती है। कुछ उदाहरण देखिए—

(१) लाखी ने उठी हुई गदेली को हिलाकर वर्जित किया मानो रक्षा करने वाले नाग ने फन उठाया हो।

(२) खेत से थोड़ी दूर नदी बह रही थी। उसके एक सिरे का पानी बहता हुआ दिखाई दे रहा था। चन्द्रमा की छिटकती चांदनी झिलमिल जान पड़ती थी मानो चाँदी की चादरों के थानों पर थान खिलखिला रहे हों। सम्पूर्ण लहरों का समूह चांदी की उन चादरों को ओढ़ लेने की होड़ सी लगा रहा था।'

अलंकारों के साथ मुहावरों का भी कलात्मक प्रयोग मिलता है, जिससे भाव-प्रकाशन तथा मानव-स्वभाव का प्रचुर ज्ञान हो जाता है। अलंकारों के प्रयोग में जहाँ मितव्ययता मिलती है, वहाँ वे भाव तथा परिस्थिति को भी स्पष्ट करने की अपूर्व क्षमता रखते हैं। नवीन उपमाएँ तथा सौन्दर्य विधान के उपयुक्त उत्प्रेक्षा अलंकारों का बड़ा मर्मस्पर्शी प्रयोग है।

भाषा—

वर्मा जी की 'मृगनयनी' की भाषा सरल, स्पष्ट और सुबोध है। शब्द चयन में उदारता और भावाभिव्यक्ति में सहज स्वाभाविकता है। व्यर्थ की साहित्यिक जटिलता या संस्कृत गर्भित प्रयोगों से इन्हें अरुचि है। स्वाभाविक गति से वे कहानी कहते चलते हैं। फलतः इसमें पर्याप्त प्रवाह और अभिव्यक्ति की सामर्थ्य है।

बुन्देलखण्डी वातावरण की सृष्टि के हेतु कहीं कहीं स्थानीय शब्दों का प्रयोग किया है। "झीम, खिसूरते, उचारी, गांव भ्यास, कचुल्ले, दुमुक, हुकम्प, हुलसा. झकुरने, चमाव, रार' इत्यादि अनेक चलताऊ और ग्राम्य संस्कार में प्रयुक्त शब्दों का यत्र तत्र उपयोग हुआ है। इससे भावाभिव्यक्ति में कोई अड़चन नहीं पड़ी है।

'मृगनयनी' में अनेक मुसलमान पात्र हैं। यथार्थवाद की दृष्टि से ये पात्र उर्दू फारसी मिश्रित चलती हिन्दी बोलते हैं। अपने पात्रों को स्वाभाविक भाषा देकर वर्मा जी ने उन्हें सजीवता प्रदान की है। मुसलमानों की भाषा में प्रचलित उर्दू शब्दों जैसे – बरदाश्त, अल-बत्ते, शुमार, ताबी, पाबन्द, वक्त, वहिश्त, खिलवत, अमल, अदान, अर्ज, सुदावन्द, फितरत, ताईद, रंजिश—का भी प्रयोग किया गया है। साधारण पाठक भी इनका अर्थ समझ लेता है क्योंकि ये तत्सम रूप में ही प्रयुक्त हुये हैं।

साहित्यिक सरस स्थलों में शब्द संग्रह दर्शनीय है। शिक्षित वर्ग की भाषा में संस्कृत शब्दों का बाहुल्य है। स्वाभाविकता की रक्षा के हेतु आपने शब्द-चयन को बदला है। संस्कृत शब्दों का प्रयोग अपेक्षाकृत कम है और तत्सम व तद्भव दोनों ही रूपों में हुआ है। ग्रामीणों की भाषा सरल, सीधी और बोधगम्य है। नगर और ग्राम के पात्रों की भाषा में पर्याप्त अन्तर है। भावाभिव्यंजन की शक्ति बढ़ाने के लिए सहयोगी शब्दों का काफी प्रयोग मिलता है। स्पष्टता सरसता और बोधगम्यता आपके विशेष गुण हैं। कहीं कहीं गानों का भी प्रयोग किया गया है, जिससे वातावरण निर्माण में सहायता मिली है।

देश काल वातावरण

इस उपन्यास में मध्यकालीन भारत की संघर्ष मय स्थिति का सजीव चित्र अंकित किया गया है। यों तो कथानक की घटनायें

मूल पात्र ग्वालियर राज्य, नरवर, राई ग्राम इत्यादि से ही सम्बन्धित है, तथापि उपन्यासकार ने समग्र भारत की राजनैतिक, सामाजिक और धार्मिक स्थिति का इतिहास सम्भवतः यथार्थ रूप में चित्रण किया है। उपन्यास के संसार में प्रविष्ट होते ही हमें मध्य युग का संघर्षमय सामन्ती वातावरण मिल जाता है, जिसमें मालवा का गयासुद्दीन, उसका [illegible] नसीरुद्दीन, दिल्ली का सिकन्दर लोदी, ग्वालियर का राजा मानसिंह तोमर तथा अन्य छोटे बड़े व्यक्ति राज्य-लिप्सा, या सौन्दर्य वासना लोलुपता के कारण संघर्ष करते हुये मिलते हैं

ऐतिहासिक स्थिति

उपन्यास की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के निर्माण में वर्मा जी सतत प्रयत्नशील रहे हैं। यत्र तत्र ऐसे अनेक वर्णन आये हैं, जिनके द्वारा वे पृष्ठभूमि की कड़ी जोड़ते, राजनैतिक स्थिति का स्मरण कराते चलते हैं। रोमांटिक दृश्यों के मध्य में एक एक ऐतिहासिक दृश्य आ जाता है, जिससे पाठक निरन्तर होते हुए युद्धों, सेनाओं, राज्य वृद्धि के लिए परस्पर झगड़ते हुए सामन्तों को न भूल सके।

उपन्यास का प्रारम्भ ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से ही होता है। लेखक ने प्रारम्भ ही में ग्वालियर पर १५ वीं शताब्दी में होने वाले आक्रमणों बहलोल लोदी तथा उसके उत्तराधिकारी सिकन्दर लोदी के विफल प्रयासों एवं मानसिंह तोमर का निर्देश कर दिया है। सिकन्दर लोदी के पश्चात् ग्वालियर की लौटती हुई समृद्धि तथा पश्चिम दक्षिण में लगभग छः कोस की दूरी पर साँक नदी के किनारे राई नामक ग्राम का भी कुछ संकेत पाठकों को दे दिया गया है। इस राई ग्राम में तथा उसके समीप के जंगलों में ही आधा उपन्यास चलता रहता है। कहीं यह वर्णन विस्तृत होकर पाठक को थका न दे, इसलिए अति संक्षेप में यह स्मरण करा दिया गया है।

स्थानीय इतिहास के अतिरिक्त समग्र भारत की राजनैतिक अवस्था एवं अशान्त वातावरण का भी चित्रण करा दिया गया है।

जिससे पाठक पात्र की परिस्थिति पर एक विहगंम दृष्टि डाल सके।

'मृगनयनी' में लेखक का सन्देश

ऐतिहासिक उपन्यास में लेखक का क्षेत्र सीमित रहता है। फिर भी अप्रत्यक्ष रूप से वह अपना सन्देश किसी पात्र के माध्यम द्वारा अभिव्यक्त कर देता है। वर्मा जी ने जीवन धर्म तथा समाज के विषय में जो सन्देश प्रकट किये हैं, वे इस प्रकार हैं:—

१—कर्म मार्ग का पथ—

हम व्यर्थ के मत मतान्तर, तर्क तथा उलझी समस्याओं से संघर्ष करने के स्थान पर अपना कार्य करते जांय, कर्त्तव्य से विमुख न हों। सिद्धान्तवाद के कट्टर अनुयायी बनना मूर्खता है। कर्मवाद का संदेश राजा मानसिंह और विजयजंगम पण्डित दोनों देते हैं। विजयजंगम के कुछ सिद्धान्त वाक्य देखिये:—

'जीवन में काम करना, श्रम से रोटी का उपार्जन करना और शिव का नाम लेना, यही गौरव है। इसी में जीवन की सार्थकता है।'

'जीवन में कायिक काम ही सब कुछ है। एक काम से मन उचटे तो दूसरा करने लगे —मैं तो अवकाश इसी को कहता हूं।'

काम ही सब कुछ है। काम करना ही मानव का धर्म है। काम करते करते ही मनुष्य स्वर्ग लोक की प्राप्ति कर सकता है।'

राजा मानसिंह कहते हैं, "ये बैठे ठाले के वाक् युद्ध व्यर्थ हैं। कर्म मुख्य है। जो इससे बचना चाहते हैं, वे ही दांयें बांयें पगडंडियां ढूंढ़ते हैं ......न मैं शास्त्री हूं न पण्डित। केवल इतना कह सकता हूं कि लड़िये भली कुछ काम करिये और आगे की तैयारी में लगिये ...।'

२—प्राचीन कट्टर रूढ़िवादिता एवं जाति-पांति की संकुचितता का विरोध—

बोधन की कट्टर एवं रूढ़िवादिता तथा विजय की उदारता दिखा कर वर्मा जी ने रूढ़िवादिता का खंडन किया है। मानसिंह भी जाति बन्धन और रूढ़िवाद का निरन्तर विरोध करता है और लाखी और अटल का विवाह कराता है। मृगनयनी पर्दा प्रथा को तोड़ती है। मानसिंह के ये वचन देखिये:—

'अटल, महावीर, गौतम बुद्ध कौन थे? ...शास्त्री सोचो, इस-प्रकार का कट्टर वर्णाश्रम हिन्दुओं की कितनी रक्षा कर सका है? रक्षा के लिये ढाल और तलवार दोनों अनिवार्य रूप से आवश्यक है। जाति-पांति ढाल का काम तो कर सकी है, और कर रही है, परन्तु तलवार का काम न तो हाल के युग में उससे कर पाया है, और न कभी कर पायेगी।'

बेचारी लाखी जाति-पांति की कट्टरता की शिकार अन्त तक बनी रहती है। मरते मरते तक वह हिन्दू धर्म के इस कलंक को नहीं भूल पाती। वह अन्त में अटल से व्यंग्य करते हुए कहती है—

'ब्याह कर लेना अपनी जाति-पांति में...।' अन्त तक उसे जाति-पांति की कट्टरता का भूत नहीं छोड़ता।

'मृगनयनी' के परिचय में स्वयं वर्मा जी ने इस समस्या की ओर संकेत किया है—

'जात पांत ने भारत में रक्षात्मक कार्य भी किया है और आज भी शायद कुछ कर रही है, परन्तु इसका विनाशात्मक काम भी कुछ कम नहीं हुआ...।' इससे प्रकट होता है कि जाति-पांति की संकुचितता को उन्होंने जानबूझ कर रखा है।

३—संयम और कर्तव्य का महत्व—

मानव जीवन का सुख नियम संयम पर निर्भर है। संयम से ही सौन्दर्य और स्वास्थ्य निखरता है, शक्ति आती है। प्रेम स्थिर रहता

है। मनुष्य का प्रेमी-प्रेमिका के प्रति सतत आकर्षण बना रहता है। प्राचीन भारतीय संस्कृति में संयम वाले प्रेम की ही महत्ता को स्वीकार किया गया है। इसी का प्रतिपादन वर्मा जी ने 'मृगनयनी' में किया है। उनकी पात्रियों का प्रेम प्रेमियों को कर्त्तव्य मार्ग पर आगे बढ़ाता है, नवीन प्रेरणा देता है। वासना के पंक में नहीं फंसाता। मानसिंह मृगनयनी से उसकी प्रेरणा के विषय में कहता है—

'तुम संयम से प्रेम को अचल बनाती हो और मैं अपने विकार से उसे चंचल कर देता हूँ। संयम के आधार वाला प्रेम ही आगे भी टिके रहने की क्षमता रखता है।'

. . . .

मृगनयनी कहती है, 'संकल्प और भावना जीवन के तराजू के दो पलड़े हैं। जिसको अधिक भार से लाद दीजिए, वही नीचे चला जायगा। संकल्प कर्त्तव्य है और भावना कला। दोनों के समान समन्वय की आवश्यकता है।'

दबे हुए स्वर में मानसिंह बोला, 'कर्त्तव्य वाले अंग में कौन सी कसर रह गई है, देवि!

मोतियों की माला और सम्पूर्ण चित्र पर दृष्टि घुमाती हुई मृगनयनी ने कर्तव्य वाले अंश पर उंगली रख कर कहा, 'प्रजा के सुख की, देश की स्वाधीनता की।'

मानसिंह ने काँपते हुए होठों से धीमे धीमे शब्द निकाले—कला और कर्त्तव्य का समन्वय इस कसर को किसी दिन अवश्य पूरा करेगा।'

४–सच्चा और निष्ठावान् प्रेम—

राजा मानसिंह और मृगनयनी, लाखी और अटल का निष्ठावान् प्रेम चित्रित कर वर्मा जी ने नए आदर्श हमारे सामने उपस्थित किए हैं। लाखी अटल का पवित्र प्रेम व्यावहारिक है। मृगनयनी प्रेम में राजा को सहयोग दे कर प्रेरक शक्ति का कार्य करता है। वह

'वीणा को बजाते बजाते, काम पड़ने पर यदि तुरन्त तलवार न उठा पाई, कोमल सेज पर सोते सोते संकट आने पर यदि तुरन्त ही उछल कर कमर न कसी, ध्रुवपद को गाते गाते शत्रु के सामने आ खड़े होने पर यदि तुरन्त गरज कर चिनौती न दे पाई तो ऐसी वीणा सेज और ध्रुवपद की तानों का काम ही क्या ?'

५—आदर्श शासक—

राजा मानसिंह के रूप में एक वीर साहसी आदर्श प्रेमी और कला साधक का नमूना उपस्थित किया गया है। वह युद्ध कला और सैन्य संचालन के साथ प्रजा वत्सलता के गुण से परिपूर्ण है। वह झोपड़ी में आकर गरीब मजदूर की सहायता करता है। मजदूर के ये शब्द देखिए—'सुना था कि महाराज ब्राह्मणों, पण्डितों और सेठों के हैं, आज जाना कि वे मजदूर और किसानों के भी हैं।'

६—कला जीवन के लिए—

वर्मा जी की कला उपयोगिता इस बात में मानते हैं कि वह जीवन को प्रेरित करे, मनुष्य को कुछ नया संदेश देकर आगे बढ़ाए कुछ प्रकाश दे। कर्त्तव्य को भुलाकर निरे सौन्दर्य या वासना को चकमाने वाली कला-साधना में उन्हें विश्वास नहीं। कई पात्रों के मुख से लेखक ने कला और कर्त्तव्य का यह समन्वय चित्रित किया है। राजा मानसिंह के ये वचन देखिए:—

'कला का अनुशीलन और कर्त्तव्य का पालन साथ साथ चल सकते हैं। मैं सेना को भी सजाऊँगा और ललित कलाओं की भी उन्नति करूँगा।'

वह कला क्या जो कर्त्तव्य को लंगड़ा कर दे और वह कर्त्तव्य क्या जो कला का अंगभंग हो जाने दे।'

परोक्ष रूप में वर्मा जी ने चित्रित किया है कि कला, सुरुचि एवं कर्त्तव्य पालन में संतुलन होना चाहिए।

७—नारी प्रेरक शक्ति के रूप में—

वर्मा जी के नारी पात्र प्रेमियों को उत्तेजित कर कर्त्तव्य-पथ पर आरूढ़ करते हैं। उन्होंने स्त्री गौरव, सौन्दर्य पवित्रता और सांस्कृतिक महत्त्व का सुचारु चित्रण किया है। भ्रष्टा पिल्ली स्वयं अपनी आचार हीनता का दण्ड पाती है। लाखी निन्नी इत्यादि सतत संघर्षशील बनी रहती हैं। भोग विलास से नारी का सौन्दर्य नष्ट होता है, स्वास्थ्य गिर जाता है और वे निकम्मी हो जाती हैं—ये भाव प्रस्तुत उपन्यास में अभिव्यक्त हुए हैं। लेखक के संदेश से पूर्ण कुछ स्थल देखिए:—

'नियम संयम से रहिए और मुझे भी रहने दीजिए। मैं चाहती हूं कि उन गुणों के साथ मेरी देह में भी वही बल बना रहे, जिसको राई से लेकर आई हूं।'

'पहले के सातियों ने आग और चिता को जितना प्यार किया, उसके बराबर तीर और तलवार के साथ भी करना चाहिये था।'

"छोड़िये मुझको,"—मृगनयनी ने कहा, "क्षत्रिय के लिये इस समय जो उचित है, उसी को करने में जुटजाइये। रनवास की रक्षा की चिन्ता को दूर कीजिये—मैं उसकी रक्षा का प्रबन्ध करूंगी,

८—फैशन का विरोध—

आज के फैशन, मिथ्या प्रदर्शन के वर्मा जी विरुद्ध हैं। वे चाहते हैं कि भारतीय नारी का शील गुण सम्पन्न व्यक्तित्व ही विकसित हो। वे पतली दुबली न बनकर मजबूत शक्तिशाली चरित्रवान बनें। नट जब भड़कीले वस्त्रों का प्रलोभन देते हैं,तो निन्नी का यह उत्तर कितना भव्य है। देखिये—

'तो क्या नटिनी बन जावे ? सौंग हूँ में ये जो तितलियाँ उड़ रही हैं। क्या वैसी बनावट बना लें।'

विचार, उद्देश्य एवं कला की दृष्टियों से वर्मा जी की 'मृगनयनी' एक श्रेष्ठ ऐतिहासिक रूमानी उपन्यास है। इसमें वर्माजी जी की उपन्यास-कला का पूर्ण विकास हुआ है। कथानक की रोचकता, शुद्ध एवं पात्रों की सजीवता और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि की सूक्ष्मता से, मृगनयनी, अतीव सुन्दर रचना है।

तृतीय खण्ड

झाँसी की रानी : कथानक-सौन्दर्य

१—महत्त्व :—

वर्मा जी ने इस वृहत् उपन्यास का कथानक पर्याप्त ऐति-हासिक अनुसन्धान के उपरान्त तैयार किया है। अपनी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के लिए यह पर्याप्त ख्याति प्राप्त कर चुका है। संभवतः इसकी ऐतिहासिक कथा भी उनके अन्य सब ऐतिहासिक उपन्यासों की कथाओं से अधिक लोकप्रिय, महत्त्वपूर्ण और विशिष्ट है। झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई पर अनेक नाटक, उपन्यास, कहानियाँ लिखी जा चुकी हैं, परन्तु वर्मा जी के प्रस्तुत उपन्यास से अधिक प्रामाणिक और रोचक पुस्तक पहले नहीं लिखी गई थी। यह उनके १५ वर्ष की ऐतिहासिक खोज-बीन, अध्ययन, भ्रमण का परिणाम है। अतएव ऐतिहासिक प्रमाणिकता और अनुसन्धान की दृष्टि से इस उपन्यास में दी गई जानकारी का महत्त्व असंदिग्ध है। इसके अध्ययन से १८५७ के लगभग भारत की राजनैतिक और सामाजिक दशा का अच्छा ज्ञान हो जाता है। इसमें देशव्यापी स्वराज्य आन्दोलन की योजना एवं '५७ की भारतीय क्रान्ति का सजीव चित्र उपस्थित कर दिया गया है। यह वह युग था, जब भारत ने पराधीनता की बेड़ियों को तोड़ फोड़ कर फेंक देने का एक महान् प्रयत्न किया था। महारानी लक्ष्मीबाई स्वराज्य स्थापन के लिए सतत युद्ध करती रहीं और उसी पर अपना जीवन न्यौछावर कर दिया। अपने समग्र जीवन में रानी लक्ष्मीबाई का एक ही उद्देश्य रहा था—स्वराज्य स्थापन। वे अङ्गरेजों को इस देश से निकाल कर भारतीय राज्य स्थापित करने के पक्ष में थीं। उन्होंने कई बार देश

विश्रृंखलित शक्तियों को एकत्र कर नेतृत्व किया और अंग्रेजी सेना से युद्ध किया। जब तक प्राण रहे, उन्होंने अपनी साधना न छोड़ी। अन्त में मर कर स्वराज्य की नींव का पत्थर बनीं। उपन्यास का कथानक राष्ट्रीय जागृति की विचारधारा से परिपूर्ण है।

कथा वस्तु-विकास—

वर्मा जी ने विस्तृत ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि के पश्चात मूल कथा वस्तु को क्रम क्रम से उभारा है। इस कथा वस्तु के निर्माण में विस्तार से काम लिया गया है, जिससे पाठक को झाँसी के इतिहास राजकीय वंश, राजनैतिक परिस्थिति, अंग्रेजों से सन्धियाँ शिवराव भाऊ के पुत्रों का राज्य सत्ता संचालन, रामचन्द्रराव के पश्चात झाँसी की गद्दी रघुनाथ राव और गंगाधर राव को प्राप्त होना मालूम हो जाय। इसी भाग में गंगाधर राव के रसिक स्वभाव का भी परिचय दे दिया गया है। उपन्यास के कथानक के प्रारम्भ होने के समय झांसी की गद्दी पर राजा गंगाधर राव को बैठे और झाँसी राज्य को अंग्रेजों द्वारा मिलते ७-८ वर्ष व्यतीत हो गए थे। नगर का शासन गंगाधर राव के हाथ में था और शेष राज्य का कम्पनी के कर्मचारियों के अधिकार में। गंगाधर राव रसिक, साहित्य और ललित कलाओं के प्रेमी, नाटकों के पारखी, अभिनेता थे। वे संस्कृत नाटकों का अनुवाद हिन्दी और मराठी में करवाया करते थे। स्वयं अभिनय किया करते थे। इसी प्रकार वे अपना विधुर जीवन व्यतीत करते थे।

कथावस्तु को वर्मा जी ने तीन वृहत भागों में विभाजित किया है—

(१) उदय अर्थात देशव्यापी आन्दोलन का रानी लक्ष्मीबाई के नेतृत्व में उदय—

(२) मध्यान्ह अर्थात् १८५७ की राज्यक्रान्ति।

(३) अस्त अर्थात् जनरल ह्यूरोज द्वारा विद्रोहकारियों का

नृशंसतापूर्वक दमन। इन तीनों भागों को विस्तार से देखने पर इनमें विशुद्ध ऐतिहासिक तथ्यों के अतिरिक्त सुसम्बद्धता भी मिलती है।

उदय —

"उदय" भाग में मनु (लक्ष्मीबाई) के जन्म, बाल्यकाल विवाह और विधवा जीवन की एक झाँकी दी गई है। पेशवाई के पश्चात बाजीराव द्वितीय अपने कामदार मोरोपन्त के साथ बिठूर में रहा करते थे। मोरोपन्त के एक कन्या थी, जिसका नाम मनु था—बुद्धि की कुशाग्र तेज और चपल बुद्धि। उसकी माता भागीरथी बाई का देहान्त चार वर्ष की आयु में ही हो गया था। अतएव लालन पालन पिता द्वारा ही हुआ था।

बाजीराव प्यार में उसे "छबीली" कहा करते थे। बाजीराव ने नाना धोंधूपन्त नामक एक बालक को गोद लिया था। मनु इसी के साथ खेलती थी। बचपन में वीर नारियों एवं स्वातन्त्र्य प्रेमी भारतीय वीर पुरुषों के पुरुषार्थ की गाथाएं सुनते सुनते मनु में देश को स्वतन्त्र करने की उत्कट लालसा उद्दीप्त हो उठी। बड़ी होने पर तात्या दीक्षित की सहायता से मनु का विवाह झांसी के विधुर राजा गंगाधरराव से हो गया और उसका नाम लक्ष्मीबाई रखा गया। उसके साथ सुन्दर मुन्दर और काशी भी आईं। विवाह होने के पूर्व गंगाधर राव को शासन का अधिकार न था। उन दिनों झाँसी का नवाब पौलिटिकल एजेन्ट कप्तान डनलप था। वह राजा के पास आया जाया करता था। गंगाधर राव ये अधिकार प्राप्त करने के प्रयत्न पहिले से ही कर रहे थे। विवाह के उपरान्त उनको अधिकार मिल गया। केवल यह शर्त थी कि एक अंग्रेजी फौज रखी जायेगी जिसका व्यय झांसी को देना होगा। गंगाधर राव प्रसन्नता से फूल उठा, दरबार हुआ, खुशियाँ मनाई गईं।

रानी लक्ष्मीबाई का विवाहित जीवन साधारणतः सुखी संतुष्ट ही कहा जा सकता है। पर्दे के कारण वे महल से नहीं निकल

जाती थीं। अतः सवारी, व्यायाम, हथियारों को चलाने का अभ्यास इत्यादि अपनी दिलचस्पी के कार्य वे किले वाले महल के ईर्द गिर्द आड़ ओट से कर पाती थीं और अपनी सहेलियों तथा किले के भीतर रहने वाली स्त्रियों को सवारी, शस्त्र प्रयोग मल्ल स्तम्भ कुश्ती का अभ्यास कराती थीं। गीता पढ़ती थीं। धीरे २ उनमें गम्भीरता आई और लोकप्रियता बढ़ती गई। उन्हें इस बात का बड़ा दुःख था कि आगमन के साथ झाँसी का पञ्चमाँश से अधिक अंग्रेजों के हाथ में चला गया था।

उधर अंग्रेज निरन्तर अपने राज्य का विस्तार करते चले आ रहे थे, हिन्दुस्तान में सर्वत्र फूट फैली थी, गाँव गाँव में उपद्रवी, डाकू बटमार भरे हुए थे। अंग्रेजों के पास सुनियन्त्रित सेनाएँ और अच्छे हथियार थे। इस लिए उनका राज्य धीरे धीरे बढ़ता जा रहा था।

रानी लक्ष्मीबाई ने शासन प्रबन्ध में रुचि ली और यह प्रयत्न किया कि अच्छी व्यवस्था बनी रहे। उन्हें भय था कि सुव्यवस्था बनी रही तो झाँसी राज्य बचा रहेगा अन्यथा अंग्रेज उसे फिर अपनी देख रेख में ले लेंगे।

रानी के एक पुत्र रत्न उत्पन्न हुआ, किन्तु दैव दुर्विपाक से तीन मास पश्चात उसकी मृत्यु हो गई। गंगाधर राव दुःखी रहने लगे। लगभग दो वर्ष पश्चात उनकी भी मृत्यु होगई। रानी लक्ष्मी बाई की आयु केवल १८ वर्ष की थी। इस दुर्घटना का उनके मन और तन पर बड़ा आघात हुआ, किन्तु स्वतन्त्र भावना उनको जीवित रखे थी। तात्या टोपे और नाना धाढूपन्त भी उनकी इस राष्ट्रीय भावना से परिचित थे। राज्य का उत्तराधिकारी न होने के कारण रानी ने दामोदरराव को गोद लेने की प्रार्थना की; किन्तु भारतीय स्वतन्त्रताका दमन करने के इच्छुक अंग्रेजों ने उसे अस्वीकार कर दिया। यही नहीं, ७ मार्च १८५४ को झाँसी का राज्य ब्रिटिश साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया गया। झाँसी के निवासियों के क्षोभ का ठिकाना न था। रानी की सेना तुरन्त युद्ध छेड़ देना

चाहती थी, परन्तु रानी ने निवारण किया। उन्हें पांच हजार [illegible] आजीवन पेंशन दे दी गई।

अंग्रेजों की बुरी नियत से घृणा कर रानी देश व्यापी स्वाधीनता आन्दोलन की योजना निर्माण करने लगीं। कभी कभी तात्या टोपे भी उनसे वार्ता करने आते। नानासाहब, रावसाहब, दिल्ली मेरठ इत्यादि प्रदेशों के बहुत से मुसलमान प्राणों की होड़ लगा कर स्वराज्य आन्दोलन की योजनाएं बनाने में जुट गए। कारतूसों में चर्बी लगाने के कारण कुछ हिन्दुस्तानियों ने प्रतिवाद किया, अंग्रेजों के प्रति घृणा उत्पन्न होती गई। अब अंग्रेज हिन्दू सिपाहियों को तिलक टीका लगाये हुए परेड में नहीं आने देते थे, इस कारण हिन्दू सिपाहियों में खिन्नता फैल गई। मऊ, मेरठ बारकपुर इत्यादि छावनियों में साधू और फकीर विविध प्रकार के वेश और रूपक धारण कर सामूहिक क्रान्ति का कार्य करने लगे अंग्रेजों को ऊपर की तह चिकनी और समतल दीख रही थी, नीचे की इस व्यापक क्रान्ति का ज्ञान न था। इस देश की जनता व्यक्तित्व मग्न और महासंस्कृत मयी है। बहुत दिनों तक कदापि विदेशी शासन सहन नहीं कर सकती। इस लिए गुलामी की अन्तर्व्यथा से पीड़ित जनता की अन्तरात्मा आसानी के साथ तत्कालीन स्वराज्य क्रान्ति के नेताओं की बात सुन रही थी और मन में गाँठों पर गाँठें बांधती चली जाती थी, कि कब अवसर मिले और सिर से बोझ उतार फेंके।

बप्पाह—

साधु, नर्तकियों, गुप्तचरों द्वारा चुपचाप स्वराज्य आन्दोलन का कार्य चल रहा था। जुही झाँसी की छावनियों तथा झाँसी ग्वालियर में प्रचार कार्य कर रही थी। तात्या टोपे अपनी शक्ति बढ़ा रहे थे। नाना साहब संगठन में लगे रहे। एक विश्वस्त व्यक्ति अजीमुल्ला को विलायत भेजा गया, अर्जी के द्वारा अपील की गई,

किन्तु वह स्वीकृत नहीं हुई। उधर अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रों में अंग्रेजों की शक्ति का ह्रास हो रहा था।

सन् १८५६ में ईस्ट इण्डिया कम्पनी के कर्णधार भारतवर्ष भर को, छोर से छोर तक ईसाई बनाने का स्वप्न देखने लगे थे। कैनिंग ने विपत्ति के बादल को देख लिया था, पर ईसाई धर्म के प्रचार के लिए वह भारत आया और धर्म प्रचार के लिए हिन्दुस्तान के खजाने से निकाल कर रकम दी।

इधर नाना साहब, तात्या, बहादुरशाह और उनकी बेगम जीनत महल, अवध की बेगम हजरत महल और रानी लक्ष्मीबाई का स्वराज्य आन्दोलन प्रचार जारी था। स्वाधीनता युद्ध के लिए क्षेत्र तैयार हो रहा था। संयोग से सन् १८५७ की जनवरी में एक घटना हो गई। दमदम की छावनी में एक मेहतर सिपाही से पानी पीने का एक लोटा माँगा। ब्राह्मण सिपाही मेहतर को लोटा कैसे देता। वह मेहतर हो या न हो प्रचारक अवश्य था। उसने ताना दिया। बोला—

"जात पाँत का यह घमण्ड! आ रहे हैं कारतूस जिनको दाँत से खोलना पड़ेगा, जिसमें सूअर और गाय की चर्बी लगी है। देखें तुम्हारी जात उन कारतूसों के प्रयोग के बाद रहती है, या नहीं।"

छावनियों में इस बात से सनसनी फैली, क्षोभ फैलता और बढ़ता गया। दमदम के उन सिपाहियों ने हजारों चिट्ठियाँ हिन्दुस्तान भर की छावनियों में भिजवाईं। झांसी की छावनी में भी यह चिट्ठी आई। फरवरी में बारकपुर की १९ नम्बर पल्टन को कारतूस प्रयोग करने के लिए दिये गये। उन्होंने प्रयोग करने से इन्कार कर दिया। उस पल्टन के एक सिपाही मंगल पाण्डे को फाँसी दे दी गई।

१० मई को मेरठ में तलवार, बन्दूक चल गई। अंग्रेजों को मार कर सिपाही दूसरे दिन दिल्ली पहुँच गए। वहाँ की फौजें भी उनसे मिल गईं। भारतीय फौज ने दिल्ली के लाल किले पर अधिकार कर लिया। बहादुरशाह को भारत का सम्राट् घोषित किया।

कानपुर में नाना को राज्याधिकार दिये गये। झाँसी में महारानी लक्ष्मीबाई ने कार्य संभाला। झाँसी को निर्बल समझ कर पहले नत्थेखाँ तथा फिर सदाशिवराव नेवालकर ने आक्रमण किए पर शूरवीर रानी ने उन्हें पराजित कर भगा दिया। डाकू सागरसिंह को पकड़ कर रानी ने अपना स्वामिभक्त सेवक बना लिया। इस क्रान्ति की सूचना जब इंगलैंड पहुँची तो जनरल ह्यूरोज़ को दमन के लिए भारत में भेजा गया।

अस्तु:—

जनरल ह्यू रोज़ क्रांति का दमन करता आ रहा था। वह और अग्नि बरसाती हुई रोज़ की सेना १२ मार्च सन् १८५७ को तालबेहट पहुंची। विप्लवकारी भाग गए और रोज़ ने तालबेहट का किला सहज ही अधिकार में कर लिया। ब्रिगेडियर स्टुअर्ट ने चन्देरी को पराजित किया। मऊ के दमन के लिए रोज़ ने कानपुर विध्वंस के पश्चात एक दस्ता सीधा भेज दिया था। उसने झाँसी पर चढ़ाई करने के पहले रानी लक्ष्मीबाई के पास सम्वाद भेजा। रानी युद्ध के लिए तैयार बैठी थीं। रोज़ झाँसी की ओर सावधानी से बढ़ा। रावसाहब और टोपे कालपी में थे। तात्या सेना लेकर झाँसी आ रहा था, किन्तु रोज़ ने उसे बीच में ही हरा दिया।

राहतगढ़ के भागे हुए लगभग पाँच सौ पठान रानी के शरणार्थी हुए। रानी ने उन्हें नौकर रख लिया। इनमें एक सरदार गुलमुहम्मद भी था। उन्होंने प्रण किया, "स्वराज्य के लिये रानी के चरणों में सिर दे देंगे।" झाँसी नगर के कोट पर सब फाटकों पर बड़ी-छोटी तोपों का उचित प्रबन्ध कर दिया गया, बारूद और गोले फाटकों की बुर्जों में इकट्ठे किए गए और निरन्तर युद्ध की सामग्री तथा रसद भेजने का प्रबन्ध कर दिया गया। दीवान दूल्हाजू ओरछा फाटक पर पीरअली सागर खिड़की पर, कुंवर खुदाबख्श सैयर फाटक पर, कुंवर सागरसिंह अन्नेराव फाटक पर, पूरन कोरी उन्नाव

फाटक पर, नियुक्त किये गये। दीवान जवाहर सिंह के हाथ में सम्पूर्ण नगर और फाटकों की रक्षा का भार सौंपा गया। दक्षिणी बुर्ज की तोपें गुलाम गौसखाँ के संचालन में, पूर्व और उत्तर की तोपें भाऊ बक्शी के हाथ में और पश्चिम की तोपें दीवान रघुनाथसिंह के अधिकार में दी गईं।

घमासान युद्ध हुआ जो बहुत दिनों तक चलता रहा। रानी का जासूस पीरअली रोज से मिल गया और सारे गुप्त भेद शत्रु को बताता रहा, संयोग से दूल्हाजू की मानहानि हो गई। वह नाराज रहा और अवसर पाकर उसने विश्वासघात किया। झाँसी का ओर्छा फाटक खोल दिया। इससे अंग्रेज प्रविष्ट हो गए। भीषण मारकाट हुई। रानी लक्ष्मीबाई देशमुख, रघुनाथसिंह, जवाहरसिंह, पठान गुलमुहम्मद, सुन्दर आदि के साथ भाग कर कालपी पहुँची। रावसाहब और तात्या वहाँ थे। दूसरे दिन रानी की इनसे भेंट हुई। उनका इन्होंने बड़ा आदर सत्कार किया।

वहाँ फिर तैयारी प्रारंभ हुई। कालपी अस्त व्यस्त था। रानी को जल्दी ही इस अस्त व्यस्तता का हाल मालूम हो गया। उन्होंने सेना के अनुशासन, कवायद-परेड और युद्ध सामग्री इत्यादि प्रसंगों पर प्रश्न किए पर असन्तोषजनक उत्तर मिले। ये सब दर्शकिमन पीने तथा आमोद प्रमाद में मस्त रहते थे। कालपी की सेना को व्यवस्थित करने की योजनाएँ बनाई गईं। २८ अप्रैल को रोज ने कालपी पर चढ़ाई कर दी।

पेशवा की हार हुई। रानी की सम्मति से ग्वालियर पर आक्रमण किया गया। उसे जीत कर पेशवाई सेना ने हर्ष और गर्व से नगर में प्रवेश किया। पेशवा बड़े ठाट के साथ माँगलिक बाजे बजवाता हुआ सिंधिया के राजमहल में पहुँचा और वहीं डेरा डाला। लक्ष्मीबाई ने अपना शिविर नौलखा बाग में रखा। पेशवा के साथी सरदार शहर के भिन्न २ महलों में जा उतरे। तात्या के दस्ते के लिए जिले वालों ने फाटक खोल दिये।

उधर रोज़ को सूचना मिली कि बलवाई ग्वालियर की ओर बढ़ते आ रहे हैं। काल्पी की जीत के उपरान्त ग्वालियर पर चढ़ा। पेशवा नाच रंग आदि में मस्त रहा। रोज़ की सेना में कुशल और अनुभवी सिपाही थे। दो घन्टे की कड़ी लड़ाई के पश्चात पेशवा की मुरार वाली सेना को रोज़ ने भगा दिया और मुरार को अपने अधिकार में कर लिया। अब तो पेशवा तथा बाँदा-नवाब किंकर्तव्य विमूढ़ हो गये। रानी ने अपनी योजना विस्तार से तात्या को समझाई।

१७ जून को सबेरे ब्रिगेडियर स्मिथ ने युद्ध का बिगुल बजाया घमासान युद्ध हुआ। रानी लक्ष्मीबाई तथा उसकी लालकुर्ती के सवारों ने छापा मारा। रानी उस दिन विजयी रहीं। दूसरे दिन अंग्रेज जनरल सावधान हो गए और उधर सवारों को कई दिशाओं से आक्रमण की योजना बनाई। रानी लक्ष्मीबाई प्रचण्ड वेग से लड़ी किन्तु अन्त में मुन्दर, रघुनाथसिंह, देशमुख और गुल मुहम्मद आदि के संग भाग निकली। अंग्रेज सैनिकों ने पीछा किया। एक स्थान पर एक नाला था। घोड़ा अड़ गया। यहाँ भी थोड़ा सा युद्ध हुआ जिसमें रानी घायल हो गई और बाबा गंगादास की कुटी के समीप स्वर्गवासी हुई। अन्त तक स्वराज्य की भावना उनके हृदय में विराजमान रही।

कथानक की विशेषताएँ

वस्तु विकास में पटुता--

इस उपन्यास के कथानक में प्रबन्ध-पटुता उपलब्ध है। वर्मा जी ने समस्त ऐतिहासिक अनुसन्धानों को दृष्टि में रखकर एक कथानक का निर्माण किया है। रानी लक्ष्मीबाई इसका केन्द्र है। प्रथम भाग में रानी की बाल्यावस्था तथा देश में व्याप्त अज्ञान और परतन्त्रता का अन्धकार वर्णित है। इस अन्धकार में मनु रूपी सूर्य का उदय होता है। जनता में धीरे धीरे अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता आती है। मध्यान्ह भाग में यह सूर्य अपनी सम्पूर्ण आभा से चमक कर देशवासियों को स्वराज्य के लिए प्रेरित करता

है। प्रत्येक प्रकार की अन्तर बाह्य प्रतिकूल परिस्थितियों में रानी का चरित्र रूपी स्वर्ण तपता है। अंग्रेजों से प्रतिरोध बढ़ता चलता है। "अन्त" में युद्ध के पश्चात रानी स्वर्ग सिधार जाती हैं। "नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः" का पाठ करती हुई वे स्वराज्य की नींव का एक पत्थर बन जाती हैं।

सम्पूर्ण कथानक रानी के चरित्र तथा विकास के साथ विकसित होता चलता है। रानी लक्ष्मीबाई का चरित्र ही इस उपन्यास की मूलभित्ति है। अधिकांश घटनाएँ उन्हीं से सम्बन्धित हैं। प्रबन्धकार की पटुता घटनाओं की शृङ्खलाओं में देखी जा सकती है। अप्रासंगिक घटनाओं का थोड़ा थोड़ा स्पर्श करता हुआ लेखक झाँसी की रानी के चरित्र विकास को नहीं भूलता। वह भिन्न-भिन्न कथा सूत्रों को सावधानी से सम्हालता चलता है।

९. असम्बद्ध घटनाएँ तथा उनका मूल कथानक से योग—

वर्मा जी ने मूल कथानक के साथ छोटी छोटी और प्रासंगिक कथाएँ भी ले ली है, जिससे रोमाँटिक स्पर्श आते हैं, देश काल की परिस्थिति का निर्णय हो जाता है, और थोड़ी देर के लिए हमारा ध्यान मूल कथानक से कुछ दूर हट जाता है।

इन कथाओं में (१) मोतीबाई, खुदाबख्श, (२) सुन्दर, रघुनाथसिंह, (३) जूही-तात्या टोपे, (४) नारायण शास्त्री-छोटी, (५) पूरन कलकारी मुख्य हैं। ये मूल कथानक के साथ चलते रहते हैं। कहीं-कहीं उपन्यासकार इनमें से किसी को उभार कर हमारा ध्यान आकृष्ट कर लेता है, पर वह अपने मूल कथानक पर ही आ जाता है नारायण शास्त्री और छोटी तक को मूल कथानक में मिला दिया गया है। राजा गंगाधरराव सजा देते हैं। इससे तत्कालीन कट्टरता स्पष्ट हो जाती है।

पजनेश और नारायण शास्त्री की मित्रता दिखाकर लेखक ने पजनेश को भी सम्बद्ध कर दिया है। शास्त्री और पजनेश दोनों

गसिक है। इसलिये कट्टर पन्थियों के प्रतिकूल है। उस काल में फैले हुए तरह-तरह के मत मतान्तरों को इस माध्यम से अभिव्यक्त कर दिया गया है। मोती, खुदाबख्श, मुन्दर, रघुनाथ, जूही, तात्या आदर्श प्रेमियों के उदाहरण हैं, जो इस वीर-रस के उपन्यास को रोमांटिक वातावरण से परिपूर्ण कर देते हैं। पूरन-झलकारी आदर्श दम्पत्ति हैं। इनसे हर प्रकार के पात्र हमें मिल जाते हैं।

२—रोचकता और कुतूहल

सफल उपन्यास के कथानक के ये दो गुण इस उपन्यास के कथानक में वर्तमान हैं। लेखक कहानी कहने की कला में प्रवीण है। दृश्यों को पुनः पुनः परिवर्तित कर लेखक ने रोचकता का ध्यान रखा है। यदि मध्य में रोमांटिक स्पर्श न होते तो सम्भव था, कथानक में शुष्कता आ जाती किन्तु वर्मा जी ने प्रबन्ध की गठन शीलता के साथ वस्तु-विकास में रोचकता का सम्मिश्रण किया है।

पाठक यह जानने को उत्सुक रहता है कि आगे क्या आने वाला है। घटनास्थल पर क्या होगा? दुर्भाग्य के बादलों से रानी की कैसे रक्षा होगी? फिर, जब वह रानी को बचते देखता है, तो हृदय में प्रसन्न होता है। यद्यपि वातावरण सृष्टि के लिए ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को स्पष्ट करना आवश्यक हो गया है, तथापि पात्रों में व्यक्तिगत गुण डाल कर रोचकता उत्पन्न कर दी गई है।

युद्धों के दृश्यों में कौतूहल का निर्वाह बड़ी सफलता के साथ हुआ है। आवेश और उत्तेजना में हम भयंकर युद्ध देखते हैं, अन्दर ही अन्दर भयभीत होते रहते हैं। अनेक बार हमारी आशाएँ ठीक निकलती हैं, पर कई बार कुछ नवीन बात हो जाती है। आशा निराशा का यह द्वन्द्व निरन्तर चलता रहता है। वीर रस का भर पूर निर्वाह हुआ है।

चरित्र चित्रण

लक्ष्मीबाई—चरित्र चित्रण की दृष्टि से उपन्यास की प्र

पात्रीको वर्मा जी ने सर्वाधिक महत्ता, स्थान और ऐतिहासिक प्रमाणिकता प्रदान की है। लक्ष्मीबाई अधिकांश घटनाओं का केन्द्र हैं। उनकी आन्तरिक एवं बाह्य प्रवृत्तियों पर पर्याप्त प्रकाश डाला गया है। उन्हें हर प्रकार से आदर्श वीर भारतीय नारी के रूप में उपस्थित किया गया है।

उनका बाल्यकाल

बचपन में मनु को युवकोचित कार्यों की ओर रुचि थी। नाना और राव साहब के साथ रहने के कारण उन्हें युवकों के व्यायाम, कुश्ती, मलखम्ब, अश्वारोहण, शस्त्र संचालन की ओर रुचि हो गई थी। उनका शरीर पुष्ट था। छोटी मोटी चोट की वे परवाह न करती थीं। उन्हें देश की स्वाधीनता के प्रति आरम्भ से ही दिलचस्पी थी। वीर पुरुष एवं नारियों की वीर गाथाएं सुन सुन कर उनमें साहस, बल, निर्भयता, दृढ़ता और वीरता के सद्गुणों का विकास हो गया था। वे आलस्य से सदा दूर रहती थीं, चंचलता, चपलता, स्फूर्ति और सत् उद्योग के लिए हठ उनके प्रधान गुण थे। चंचल होने पर भी विचारशील और गम्भीर थीं। बचपन से ही वे देश तथा समाज के गम्भीर प्रश्नों पर विचार किया करती थीं। उनकी बुद्धि उनकी अवस्था से बहुत आगे निकल चुकी थी। मनु इतनी सुन्दर थी कि छुटपन में बाजीराव इत्यादि उन्हें "छबीली" के नाम से पुकारते थे। मनु और नाना के तीन भाई साथ २ खेलते, खाते, और पढ़ते थे। मलखम्ब, कुश्ती, तलवार बन्दूक का चलाना अश्वारोहण, पढ़ना लिखना इत्यादि—सब इन तीनों ने छुटपन से साथ साथ सीखा था। सबमें मनु चपल, हठी और बहुत पैनी बुद्धि की थी। आयु कम होने पर भी वह इन हुनरों में उन बालकों से आगे निकल चुकी थी। स्त्रियों की संगति कम प्राप्त होने के कारण वह लाज संकोच की दमन और झिझक से दूर हटती गई थी। छत्रपति शिवाजी, प्रताप इत्यादि के पुरातन आख्यानों ने मनु क

कल्पना को एक अस्पष्ट और अदम्य गुदगुदी दे रही थी। वह सुन्दर स्वस्थ, वीर, कुशाग्र कन्या थी।

उनका दाम्पत्य जीवन

विवाह के उपरान्त उनका नाम रानी लक्ष्मीबाई हो गया। वे अब भी स्त्रियों को सवारी, शास्त्र प्रयोग, मल्लखम्ब, कुश्ती आदि का अभ्यास कराती थीं। बचे हुए समय में धार्मिक ग्रन्थों का अध्ययन किया करती थीं। भगवद् गीता पर उनकी परम श्रद्धा थी। चपलता के स्थान पर अब गम्भीरता, वाचालता के स्थान पर संयम आ गया। क्रुध हो जाने की वृत्ति भी उत्पन्न हो गई थी। व्यंग करने की इच्छा अवश्य कुछ बढ़ती पर थी, परन्तु वह सहज, सरल भव्य, देदीप्य मुसकान सदा साथ रही और चित्त की दृढ़ता भी बढ़ती गई। दया, करुणा, अहिंसा, विनोद आदि सद्भाव उनमें विकास पर थे।

स्वराज्य स्थापना, की ओर उनकी प्रवृत्ति बढ़ती जा रही थी। गान एवं नाटक शाला की ओर कोई खास रुचि नहीं थी। उन्हें शृङ्गार रस की कविताओं से उन्हें घृणा था। गंगाधर राव की, खुशामद की नीति, शृंगार रस की कविता को प्रोत्साहन देना उन्हें अच्छा नहीं लगता था। कल्पना के सुनहरे पर थोथे जगत में रहने की अपेक्षा वे ठोस कार्य को पसन्द करती थीं। वह उन बातों में दिलचस्पी रखती थीं, जिनमें सार हो। धीरे-धीरे उन्होंने राज्य का प्रबन्ध और महकमों की सुव्यवस्था करना सीखा और बहुत सा राज्य का कार्य सम्हाल लिया। रानी की विलक्षणता बुद्धि एवं प्रतिभा का आभास पाकर विस्मय हुआ। अल्प आयु में उनका आचार विचार आश्चर्य उत्पन्न करने वाली परिपक्वता का सा प्रतीत होता था। उस युग की कन्यायें जिस आयु में खेलना, खाना, पहिनना, ओढ़ना ही सब कुछ समझती होंगी, उस आयु में लक्ष्मीबाई गम्भीरतर होती चली गईं। छुटपन की मनु, लक्ष्मीबाई के विशाल आदर्शों में विलीन हो गई। सुन्दर मुन्दर और काशीबाई सदा उसके साथ रहती थीं।

आयु में अधिक शृंगार प्रिय, दुर्बल, विलासी और क्रूर पति पाकर भी वे पतिव्रता रहीं। निरन्तर पति को सन्मार्ग की ओर प्रेरित करती रहीं। पति के रूप में उनमें रमणी सुलभ कोमलता, भावुकता, भारतीय मर्यादापालन, आदर्श एवं व्यवहार का समन्वय था। अपने पुत्र को वे बहुत प्रेम करती थीं। गोद लिए हुए पुत्र को रण में भी अपने साथ लिए रहीं। पुरानी जीर्ण-शीर्ण सामाजिक रूढ़ियों, ढोंग, आडम्बर से उन्हें घृणा थी वे नारी जागरण के लिए निरन्तर सचेष्ट रहती थीं।

रानी का धार्मिक जीवन

वे धर्म और आध्यात्म में विशेष रुचि रखती थीं। गीता का स्वाध्याय उनके नित्य कर्म का एक प्रधान अङ्ग था। उनका जीवन गीता में वर्णित कर्मयोगी का जीवन था। प्रगाढ़ धार्मिकता, उदारता, करुणा, प्रेम, और वात्सल्य भाव उनमें कूट कूटकर भरे हुए थे। वे शिव और कृष्ण की अनन्य उपासिका थीं। एक ओर विनोद शीलता, तो दूसरी ओर उनमें गम्भीर दार्शनिकता का पुट था। उनका अन्तर बहुत कोमल और उदार था।

पति का देहान्त हो जाने के उपरान्त उनका जीवन धार्मिकता और पूजा से और भी परिपूर्ण हो गया था। विधवा जीवन में वे नित्य प्रातःकाल ४ बजे स्नान कर ८ बजे तक महादेव का पूजन करती थीं और उसी समय गवैये उन्हें भजन इत्यादि सुनाते थे। ११ बजे के उपरान्त रानी फिर स्नान करतीं और भूखों को खिला कर तथा कुछ दान धर्म करके तब भोजन करतीं""फिर तीन बजे तक ग्यारह सौ राम नाम लिखकर आटे की गोलियां मछलियों को खिलातीं। उस समय वे किसी गूढ़ चिन्ता, किसी गूढ़ विचार में निमग्न रहती थीं""सन्ध्या के उपरान्त ८ बजे तक कथावार्ता, पुराण, भगवद्गीता का १८ वाँ अध्याय और भजन सुनतीं।

कठोर संघर्षों तथा युद्धों में भी भजन पूजन उनका नित्य कर्म

रहा। झांसी की सब औरतें सदा पूजन के लिए उनके इर्द गिर्द एकत्रित रहती थीं।

घनघोर युद्ध में भी उनका धैर्य बना रहता था। युद्ध की रातों में भी वे मन्दिर में जाकर महादेव की प्रार्थना करती थीं। स्वप्न में उन्हें भारत माता का ध्यान रहता था। गृहस्थी में रह कर भी वे वैराग्य भाव रखती थीं। वे अन्ततः सती, साध्वी, पति परायण भारतीय ललना का आदर्श बनी रहीं।

वीर क्षत्राणी और कुशल सेनानी

रानी लक्ष्मीबाई के चरित्र का सबसे उज्ज्वल पहलू एक राजनैतिक क्रान्तिकारी का है। उनका हृदय देश की गुलामी, जनता की अज्ञता, मूढ़ता विलासिता और शैथिल्य देख कर अत्यन्त दुखी होता था। वे अंग्रेजों की साम्राज्यवादी नीति देख कर उत्तेजित हो उठती थीं। वे राजनीति और धर्मनीति के समीकरण में विश्वास करती थीं। उनका हृदय देश प्रेम से परिपूर्ण था। वे भारतीय संस्कृति, सभ्यता शास्त्र कलाएं सुरक्षित रखने और उन पर आचरण करने में विश्वास रखती थीं।

देश व्यापी स्वतन्त्रता संग्राम की योजना बनाना साहस और वीरता से उसका नेतृत्व करना अनेक युद्ध एवं प्रतिकूलताएं सहन कर लड़ते २ मर जाना उन्हें स्वराज्य की नींव का एक पत्थर बनाती है। वे राजनीति में कुशल थीं। वे जानती थीं कि अंग्रेज जाति बहुत धूर्त है। उसका सामना चाणक्य नीति से होना चाहिए। व्यवहार कुशलता, नीति समानता, आत्मसंयम, उत्कट प्रेम उनके रोम रोम में भरा था

युद्ध में उन्होंने अपना क्षत्राणी और कुशल सेनानी का रूप दिखाया। वे युद्ध विद्या में इतनी निपुण थीं कि वी दोनों हाथ से हाथ लेती थीं। उनके वचन सुनकर, सेना में नव स्फूर्ति, साहस, धैर्य और वीर-भाव का संचार हो उठता था। सगरसिंह जैसे डाकू

को पकड़ कर अपने ओज और पराक्रम से प्रभावित कर लेना शौर्य का प्रतीक था।

वे सदैव सतर्क एवं जागरूक रहीं। आराम या विलास से उन्हें अरुचि थी। किले पर जब मौत बरस रही थी, वे धैर्यपूर्वक सब मोर्चों का निरीक्षण कर रहीं थीं। वे ऐसी कुशल सेनानी थीं कि दो बार उन्होंने शत्रु को मार भगाया था। तात्या टोपे के सम्मुख उन्होंने प्रण किया था—

"मैं लड़ूंगी। आज सब के सामने प्रण करती हूँ कि यदि समस्त अंग्रेजों का मुझे अकेले सामना करना पड़े, तो करूंगी।"

रानी आदर की भूखी न थीं, वे निरन्तर ठोस और खरे काम में विश्वास करती थीं। कालपी में आकर उन्होंने वहाँ के सैनिकों को सुव्यवस्थित किया, संगठन मजबूत किया और विलासी, पेशवा में नव-जीवन संचार किया। कौंच के दरबार में राव साहब के ये शब्द रानी के चरित्र पर प्रकाश डालते हैं—

"आपने झाँसी में अंग्रेजों जैसा करारा मुकाबिला किया, वह अवर्णनीय है। कौंच में हमारी सेना और युद्ध सामिग्री को बचा कर ले आने में आपका बहुत बड़ा हिस्सा है। आप सरीखा निपुण सेनापति शायद ही कोई हो।

रानी बोलीं—"कौंच की लड़ाई में आपका प्रबन्ध बहुत बुरा था। सेना में कोई व्यवस्था नहीं है। अंग्रेजी सेना अपनी व्यवस्था के कारण ही विजय प्राप्त करती है। हमारे सैनिक शूरवीर और पराक्रम में अंग्रेजों से बढ़े चढ़े हैं, परन्तु व्यवस्था और दूरदर्शी योजना की कमी के कारण उनका शौर्य विफल हो जाता है। जब तक आप अपनी सेना का अच्छा प्रबन्ध नहीं करेंगे और संयम से काम नहीं लेंगे, युद्ध में यश प्राप्त नहीं होगा।" रानी ने जो योजना बनाई उसी के अनुसार मोर्चे बनाए गए, तोपें रखी गईं, गोलन्दाज नियुक्त और सरदार विभक्त किए गए। इससे उनकी कुशाग्र बुद्धि, युद्ध सम्बन्धी ज्ञान, लोक प्रियता एवं अनुभव स्पष्ट हो जाता है।

वे युद्ध विद्या और राजनीति में पारंगत थीं।

गंगाधर राव—

गंगाधरराव साहित्य और ललित कलाओं के पूरे रसिक थे। गायक, वादक, वीणा और पखावज के उस्ताद और रीतिकाल तथा भक्तिरस की मोद वाले कवि गंगाधर राव की महफिल को आबाद करते थे। उन्होंने दूर दूर से नाना प्रकार के हस्त लिखित ग्रन्थ एकत्रित कराये और विशाल पुस्तक भण्डार से अपने पुस्तकालय को परिपूर्ण कर दिया नाटकों का इन्हें विशेष शौक था, वे संस्कृत नाटकों का हिन्दी और मराठी में अनुवाद कराया करते थे। उनका अभिनय भी कराया करते थे और स्वयं अभिनय भी करते थे। यदि पुरुष के अभिनय से सन्तोष न होता था, तो स्त्री की भूमिका में भी आ जाते थे।

स्वभाव के क्रोधी एवं विलासी थे। अपराधियों को कठोर दण्ड देते थे। गंगाधर राव का क्रोध चढ़ जाने पर उतरना मुश्किल से था। जाति और धर्म के मामले में एक बार झगड़ा होने पर उन्होंने अपराधी के गले में तार का गर्म जनेऊ डलवाने का दण्ड दिया था।

विवाह होने के पश्चात गंगाधर को शासन का अधिकार प्राप्त हो गया। उन्हें यह मानना पड़ा कि झाँसी में एक अंग्रेजी फौज रखी जायगी, व्यय झाँसी राज्य को देना होगा। उन्होंने नकद रुपयों न देकर कम्पनी सरकार का आग्रह निभाने के लिये झांसी के राज्य से २ लाख [illegible] हजार चार सौ अट्ठावन रुपये वार्षिक आय का एक इलाका उन्हें दे दिया। खुशियाँ मनाई गई, परन्तु अनेक झाँसी निवासियों को उनमें खोखलापन ही दिखाई दिया। स्वयं राजा को नाटकशाला में यथेष्ट मनोरंजन प्राप्त न हो सका।

वे विलासप्रियों की निर्बलताओं को [illegible] थे। [illegible]

एक बार कहा था, "हमारे यहाँ फूट है। गाँव-गाँव में उपद्रवी, चोर और बटमार भरे हुये हैं। अङ्गरेजों के पास हथियार अच्छे हैं। इसलिये उन्होंने राज्य कायम कर लिया है।"

उनका दाम्पत्य जीवन साधारणतः सुखी रहा। लक्ष्मीबाई के मन्तव्यों पर वे ध्यान देते रहे। दोनों १८५० में प्रयाग, काशी, गया इत्यादि की यात्रा के लिये गये थे। पुत्र होने के पश्चात उनके स्वभाव में कुछ मृदुलता आ गई थी। रानी के मत को वे आदर की दृष्टि से देखते थे। साधारणतः उन्हें स्त्रियों की स्वाधीनता सहन न थी।

उनमें आत्म सम्मान और राष्ट्रीयता की भावनाऐं भी थीं। गार्डन की बातें सुनकर उनका देशाभिमान जाग्रत हो गया था। वे अनुशासन पसन्द करते थे। गार्डन और गंगाधर राव का यह कथोपकथन देखिये :—

राजा को एक व्यंग्य सूझा। बोले, "इन कानून कायदे के द्वारा आपके इलाकों में जनता को न्याय कितने समय में मिल जाता है?"

गार्डन—"अपराध वाले मामले में दो एक महीने लग जाते हैं और दीवानी मामलों में एकाध साल।"

राजा फिर हँसे, कहा—"हमारे यहाँ तो तुरन्त न्याय होता है। मैं तो दो एक दिन से ज्यादा नहीं लगाता। दीवानी और अपराधी मामलों का कोई भेद नहीं करता। पंचायतों के निर्णय को सर्वमान्य मानता हूँ "गफलत करने वाली पुलिस से चोरी का नुकसान भरवाता हूँ जनता पर मेरी धाक होनी चाहिए, न कि मेरे अफसरों की। वह राज्य भी बहुत समय तक नहीं टिक सकता जो कर्मचारियों और पुलिस की धाक पर आश्रित हो। मैं तो अपने अपराधी कर्मचारियों को लोहे की मछली के कोड़े से पीटता हूँ। अशिष्टता को दण्डित करने में भी मैं नहीं चूकता।

संक्षेप में, गंगाधर राव पहले एक दुर्बल, विलासी, कलाप्रेमी शासक श्रृङ्गार-रस की कविता के प्रेमी थे और कठोरता से शासन करते

थे। इतने पर भी उनमें देशाभिमान था। कहर पंथियों में वे प्राय मजाक उड़ाया करते थे। अन्तर्द्वन्द्व के कारण उनके मन में क्रोध की मात्रा बढ़ गई थी और अपराधियों को दण्ड देने के वे नए नए साधन काम में लाया करते थे। वृद्धावस्था के आ-जाने पर उन्होंने प्रहरी को कैद में डलवा दिया था। और उसे बिच्छू से कटवाने की सजा दी थी। उन्होंने एक विशेष वर्ग के अपराधियों को बिच्छू से कटवाने का विधान कर रखा था। कट्ठे में पैर का डालकर भोजन एक साधारण सी बात थी। गहन अपराधों में हाथ पाँव कटवा डालने की प्रथा जारी थी।

तात्या टोपे —

बाजीराव ने बाबा गुरु के अखाड़े वाले तात्या को झाँसी के संरोपन्त के लिए निवास स्थान इत्यादि की उचित व्यवस्था के लिए उन लोगों के साथ भेजा। यह तात्या ब्राह्मण था। आगे चल कर वही युवा तात्या टोपे के नाम से प्रसिद्ध हुआ। टोपे को बिठूर की अपेक्षा झाँसी अधिक पसन्द आई। उसकी कल्पना गंगाधर राव की नाटक शाला में बार बार उलझ जाती थी। झाँसी का रहन सहन, स्त्री पुरुष और वहाँ की प्राकृतिक वातावरण उसे गंगा तट से अधिक मनोहर लगे। तात्या वीर सैनिक था। फौजी पोशाक में सिर पर लोहे की फिराँसिसी टोपी पहिनता था। इस कारण गंगाधर राव ने इसे 'टोपे' के नाम से सम्बोधन करना आरंभ कर दिया था।

तात्या को रानी लक्ष्मीबाई के नेतृत्व में किए गए स्वाधीनता आन्दोलन से पूर्ण सहानुभूति थी। वह एक सेनापति जैसा कार्य रानी की आधीनता में करता रहा। रानी की आज्ञा पालन करते उसका प्रिय धर्म बन गया। वह राजनीति की चालें खूब समझता था और गुप्त योजनाओं को किसी पर प्रकट नहीं होने देता था। वह विपक्ष दल का भी कार्य कर सकता था। उसे रानी के लिये

पर्ण तेज में पूरा भरोसा था।

रानी और तात्या के वार्तालाप का एक अंश देखिये, जिससे तात्या की उत्कट देश भक्ति, रानी में अटल विश्वास, बुद्धि और विवेक प्रकट होते हैं :—

तात्या बोला—"आप बिठूर में छत्रपति और बाजीराव और छत्रसाल, न जाने कितनों का नाम लिया करतीं थीं।"

रानी—ये नाम मैं कैसे भूलूंगी" छत्रसाल का नाम अब भी मन्त्र का सा काम करता है।

तात्या—ये मन्त्र कब काम आवेंगे ?

रानी जरा मुस्कराई। तात्या उनकी मुस्कराहट को पहिचानता था""उसने आशा से कान लगाये।

रानी ने कहा—होंगे अभी समय नहीं आया है समर्थ रामदास का दिया हुआ स्वराज्य सन्देश, छत्रपति शिवाजी का पाला हुआ वह आदर्श, छत्रसाल का वह अनुशीलन अमर और अक्षय है।

तात्या अधीर होकर बोला—महारानी साहब, ये बातें कान और हृदय को अच्छी मालूम होती हैं, पर हिन्दू और मुसलमान जनता तो अचेत सी जान पड़ती है""।

रानी ने प्रश्न किया—दिल्ली का क्या हाल है ?

तात्या—"बादशाह का ? उन बिचारों को नब्बे हजार रुपया साल पेन्शन मिलती है। कविता करते हैं और कवि सम्मेलनों में छकमे रहते हैं। कम्पनी ने उनको नजर भेंट बन्द कर दी है और उनसे कह रहा है कि अपने को बादशाह कहना छोड़ो, नहीं तो पेंशन बन्द कर देंगे।"

उपरोक्त उदाहरण से तात्या की जागरूकता, राजनीति का ज्ञान, तर्क शक्ति, विवेक और प्रगतिशीलता स्पष्ट हो जाती है। ...

संधान करता है। वह सैनिक प्रकृति का व्यक्ति है उसका प्रेम राजनीति में पगा हुआ है। नर्स की जुही की ओर वह आकृष्ट हु[आ] किन्तु अपने को सम्हाले रहा। वह नारी प्रकृति को न समझने [की] अनभिज्ञता स्वीकार करता है। वह काम से काम रखता है, [प्रे]म के रोमांटिक झंझटों में नहीं फंसता जब फौज के सिपाही [गुबार] निकालने को व्यग्र हो जाते हैं, तो वह निम्न शब्दों में उनका वि[रोध] [illegible] करता है:—

तात्या— (मोती बाई से)—"अभी मरने मारने का समय न[हीं] आया है। मैं चाहता हूँ कि प्रत्येक पल्टन में से तीन अफसर [जो] बिल्कुल विश्वास के योग्य हों, चुन लिये जावें—उनसे कह दिया जा[य] कि वे ईसाई तो होंगे ही नहीं, पर इस समय अपना राज न खो[लें], क्रोध भरे रहें, परन्तु उसको निकलने किसी प्रकार भी न दें, नहीं [तो] सब किया कराया मिट्टी में मिल जावेगा। अब की बार आऊं[गा तो] सब जो कुछ करना है, उसकी तारीख और समय बतला जाऊंगा।

उसके स्वभाव में कुछ दुर्बलताएँ भी थीं जैसे—अनुशास[न] की अत्यन्त व्यस्तता, रूखापन, शुष्कता, प्रेम में राजनीति का आधि[क्]य। वह एक वीर सैनिक है, स्वदेश के प्रेम से परिपूर्ण है। र[ण] पंडित है। एक सिपाही के उच्चतम गुण उसमें विद्यमान हैं। देश [की] बलिवेदी पर मर मिटने की उसमें साधना है।

गौण पात्र

१—पीर अली:—

कुटिल चरित्र का मुसलमान पात्र है। अली बहादुर का मि[त्र] बना रह कर वह षड्यंत्र में हिस्सा लेता रहा और झाँसी के पतन [का] एक बड़ा कारण बना। यह उपन्यास में विश्वास घातक खल नाय[क] का पार्ट करता है। इसके चरित्र में अकृतज्ञता, विश्वासघात, "बग[ल] में छुरी मुंह में राम राम" उक्ति को चरितार्थ करने वाला, कुटि[ल] [illegible]

जलाता रहा। खेद है कि राजनैतिक रानी उसको गहराई से परख न सकी। विजय के हर्ष में वे अपने हितचिंतक पर सन्देह करना ईश्वर के प्रति कृतज्ञता की मात्रा भी कम करना समझती रहीं। इसलिए पीरअली शीघ्र विश्वास पात्र लोगों की गिनती में मान लिया गया।

जब अंग्रेजों की सेना आई, पीरअली जासूस बन कर अंग्रेजी सेना की गोपनीय बातें मालूम करने गया किन्तु किसे मालूम था कि वह विश्वासघात करने जा रहा है। वहाँ जा कर उसने जनरल रोज को झाँसी की सब गुप्त बातें कह सुनाईं। वापस आकर झूठ मूठ बातें इधर भी कहता रहा। पीरअली ही झाँसी के पतन का कारण बना। वह कपटी, दुष्ट, कुटिल विश्वासघातक, देशद्रोही और धूर्त था।

२—सागरसिंह डाकूः—

निर्धनों को आर्थिक सहायता प्रदान करने वाला लम्बा कुर्तीला व्यक्ति, आँखें तीक्ष्ण और चमकदार, दाढ़ी कानों पर चढ़ी हुई—यह है सागर का चित्र। वह रावली के बरुआसागर से कुछ दूर का रहने वाला था। परिवार प्रतिष्ठित सैनिकों का था। काम न मिलने पर डाकू बन गया था। रानी के सामने सागरसिंह अपने वंश के विषय में कहता है—

"हमारा वंश सदा लड़ाइयों में भाग लेता रहा है। महाराज ओरछा की सेवा में लड़ा। महाराज छत्रसाल की सेवा में रह कर युद्ध किये। जब अंग्रेज आये, तब उनकी आधीनता, जिन ठाकुरों ने स्वीकार नहीं की, उनमें हम लोग भी थे। हमको जब दबाया गया, हम लोग बिगड़ खड़े हुए और डाके डालने लगे। मैं अपने लिए तथा अपने साथियों के लिए कह सकता हूँ कि हमने स्त्रियों और दीन दरिद्रों को कभी नहीं सताया।"

सागरसिंह [illegible]

स्वामी भक्ति रहता है। वह अपने साथियों समेत झाँसी की से में भरती हो जाता है। युद्ध में वह रानी का सहायक रहता है समय आने पर वह अपने प्राणों की भी परवाह नहीं करता। उस सेवा और रानी के प्रति श्रद्धापूर्ण भक्ति उसे हमारी दृष्टि में बहु ऊँचा उठा देती है। वह डाकू से जनरल बना और खण्डेराव फाट की रक्षा में मर कर अनन्त गौरव पा गया। रानी ने कहा था, जि देश में सागरसिंह सरीखे लोग जन्म लेते हैं, वह स्वराज्य से बहु दिनों वंचित नहीं रह सकता। ये शब्द उसके चरित्र का स चित्र है।

३—नवाब अली बहादुर—

नवाब अलीबहादुर देश द्रोही, स्वार्थी, लालची, खुराफ व्यक्ति है। वह अंग्रेजों से मिला हुआ है और अपना उल्लू सीधा कर रहा है वह रत्ती रत्ती भर बातें गुप्त रूप से गवर्नर जनरल साह को पहुँचाता है। वह रानी के खिलाफ होने वाले व्यक्तियों क भड़काता है और चुपचाप उन्हें अंग्रेजों के साथ मिलाना चाहता है। उसी की प्रेरणा से दीवान नत्थे खाँ झाँसी पर आक्रमण करता है। पीरअली उसके षड़यन्त्र में शामिल है। अलीबहादुर की झाँसी से पुरानी शत्रुता चली आती थी। उसे अपना स्थान छोड़ना पड़ था। इसलिए उसके मन में झाँसी के राजा के प्रति क्षोभ और अ संतोष हो गया।

अलीबहादुर की चिट्ठी [illegible] भेज दी गई, नत्थे खाँ तैयारी शुरू करदी। अलीबहादुर को बड़ी खुशी हुई। युद्ध में नत्थे खां की पराजय हुई। अलीबहादुर ने समझ लिया कि सब गया बच निकलने का प्रयत्न किया जिसमें पीरअली की सहायता से व सफल हुआ। अलीबहादुर एक ऐसा दुश्चरित्र व्यक्ति है, जिस कोई भी देश या जाति कलंकित होती है। ऐसे व्यक्तियों को निन्द और तिरस्कार के अतिरिक्त पुरस्कार क्या दे सकता है।

४ कप्तान गार्डन—

झाँसी स्थित अंग्रेजी सेना का अफसर था। साहित्यिक, व्यापार कुशल, स्वदेश प्रेमी और भारतवर्ष को घृणा या अवहेलना की दृष्टि से देखने वाला! परन्तु भारत के राजाओं के सहलाने फुसलाने की क्रिया का अभ्यासी, अपने कर्तव्य पालन में दृढ़। हिन्दी उसने सीख ली थी। वह राजा गंगाधर राव के पास भी कभी-कभी आया करता था।

५—खुदाबख्श:—

ईमानदार एवं धर्म भीरु मुसलमान राजा गङ्गाधरराव के दरबार में रहते हैं। एक दिन मोतीबाई को रंगमंच पर देखकर उसके मुँह से एकाएक "वाह!" निकल पड़ा। मोतीबाई ने खुदाबख्श की ओर आँखें गड़ाईं। अब जब मोतीबाई रंगमंच पर जिस जिस दृश्य में आई, उसने दर्शकों पर से दृष्टि को समेट कर खुदाबख्श पर केन्द्रित किया। राजा को यह बात बुरी लगी। दूसरे दिन खुदाबख्श को राज दरबार से अलग कर दिया गया और घोषणा करवाई कि यदि वे फिर झाँसी में दिखाई पड़े तो उसके नंगे शरीर पर कोड़े लगाये जावेंगे। मोतीबाई की प्रेरणा से वह जीवन भर देश की सेवा करता रहा मानवता और देश प्रेम से उसका चरित्र परिपूर्ण है।

६—गुल मुहम्मद:—

देश भक्ति एवं राज भक्ति में गुल मुहम्मद एक आदर्श मुसलमान पठान है। वह बाहर से आये हुये पठानों का सरदार है। उसका आदर्श निम्न शब्दों से प्रकट होता है:—

"हुजूर हमम बहुत समझता है और न बहुत सुनता है। सिर्फ इतना जानता है कि हम लोग झाँसी की मिट्टी में मिलेगा और बहिश्त लेगा। सोराज की बात जाना।" पृष्ठ २६६

वह वीर, साहसी, युद्ध विद्या में निपुण साथ झाँसी रक्षा

देता है। लड़ने से कभी भयभीत नहीं होता। रानी लक्ष्मीबाई की रक्षा के निमित्त अन्तिम दम तक उनके साथ रहता है और सदा सर्वदा उनकी आज्ञा पालन करता है। अन्तिम समय में जब रानी अकेली रह गई थीं, उसने तीन व्यक्तियों को अकेले मार डाला था, अन्य मैदान छोड़ कर भाग गये थे। जब रानी घायल होकर गिरीं तो दिन भर के थके माँदे, भूखे प्यासे, धूल और खून में सने हुए गुलमुहम्मद ने पश्चिम की ओर मुँह फेर कर कहा—"खुदा, पाक परवर दिगार, रहम रहम!" उस कट्टर पठान की आँखें आँसुओं की मानो बरसने लगीं और वह बच्चों की तरह हिलक हिलक कर रोने लगा। दाह संस्कार करने के पश्चात गुलमुहम्मद ने रघुनाथ सिंह से कहा,

"दीवान साहब! हम कहाँ जायगा? हम राहतगढ़ से जब चला तब पाँच सौ पठान था। अब एक रह गया। अकेला कहाँ जायगा। हम भी मारेगा और मरेगा। बाई हम को मत हटाओ।"

फिर रानी की पवित्र हड्डियों की रक्षा के लिए उसे रोक लिया गया। वह फकीर हो गया। जब चिता के स्थान पर कुछ हड्डियाँ शेष रह गईं तो उसका हृदय द्रवित हो गया। वह बोला, 'वो 'कभी नहीं'। वो मरा नहीं। वो कभी नईं मरेगा। वो मुर्दों को जान बख्शाता रहेगा।" जब उससे रानी की समाधि के बारे में पूछा गया, कि यह किसका मजार है, तो उसने उत्तर दिया "हमारे पीर का, वो कौन बड़ा वली था।"

गुलमुहम्मद देश प्रेमी, राजभक्त रानी का अनुशासन मानने वाला, दृढ़ चरित्र, सच्चा सैनिक था। उसने रानी के अन्तिम क्षण तक उनका साथ दिया। वह उपन्यास का एक आदर्श चरित्र है। शुष्क पठान होते हुए भी उसके हृदय में करुणा, प्रेम और सहानुभूति छिपाता है।

७—बरहानुद्दीन—

गुलमुहम्मद की तरह, बरहानुद्दीन भी आदर्श स्वामी-भक्त वीर, साहसी बुन्देलखण्डी पठान है। वह अपने कर्त्तव्य में दृढ़ विश्वासी और प्रण को पूरा करने वाला। उसे जो हुक्म दिया जाता है, पूर्णरूप से पालन करता है। पीर अली को जल्दी ही मालूम हो जाता है कि बरहानुद्दीन चतुर है। वह कभी न कभी उसे पकड़ लेगा। अन्त में बरहानुद्दीन को शक हो ही जाता है। एक दिन वह चुप चाप पीर अली के पीछे चल देता है और उसे गुप्त षड्यंत्र का ज्ञान हो जाता है। वह बताता है तो उस पर अविश्वास किया जाता है और उसे स्तीफा देना पड़ता है। जाते-जाते वह पीर अली और दूल्हाजू से सतर्क कर जाता है। जब देश द्रोही दूल्हाजू फाटक खोल देता है, तो बरहानुद्दीन की सचाई खुलती है।

अपनी मृत्यु से पूर्व वह अपनी देश-भक्ति का सच्चा परिचय देता है। अकेले कई गोरों को तलवार के घाट उतारता है किन्तु यकायक उस पर कई वार हो जाते हैं और वह गिर पड़ता है। रानी ने पास जाकर देखा, वह सिपाही बरहानुद्दीन था। बरहान ने पहिचान लिया। उसने आँखें फाड़ीं पूरा बल लगाया, लेकिन कठिनाई से बोल पाया, "हजूर माफी" मुश्किल से रानी के मुँह से निकलता है "तुम सच्चे सिपाही हो।"

वास्तव में वह सच्चा, स्वामी भक्त स्वदेश प्रेमी है। उसमें वचन की सत्यता, वीरता, और सच्ची बात कटु ही क्यों न हो, कह देने की ताकत है। रानी उसकी वीरता और स्वदेश भक्ति से बहुत प्रभावित हुई और उसी स्थान पर कब्र बनाने का हुक्म दिया। बरहानुद्दीन सच्चा सिपाही, आदर्श सैनिक, देशभक्त मुसलमान था।

८—दीवान दूल्हाजू:—

प्रारम्भ में दीवान दूल्हाजू रानी का विश्वास पात्र था, किन्तु [illegible]

पर उतर आया । पीरअलीके साथ मिलकर वह जनरल रोज़ के पास पहुँचा और गंगाजी की सौगन्ध खाकर अंग्रेजों का साथी और रानी का शत्रु बन गया । उसने फाटक खोल दिये और शत्रु को अन्दर बुला लिया । वह एक दुर्बल चरित्र का व्यक्ति है ।

६---रघुनाथसिंह---

धीर, वीर, रघुनाथसिंह रानी का विश्वास पात्र सैनिक है । अन्त तक वीरता पूर्वक सेना का संचालन करता और रानी की सहायता में तत्पर रहता है । वह मुन्दर के प्रति आकृष्ट होता है । उसका प्रेम पवित्र उज्ज्वल और आदर्श प्रेम है । वह अपनी प्रेमिका मुन्दर के लिये मर मिटने को तैयार है । एक दृश्य देखिये दोनों प्रेमियों का प्रेम कितना मर्मस्पर्शी बन पड़ा है--

“बुर्ज की मुड़ेर पर एक गोला आकर टकराया ।

मुन्दर ने कहा --“यदि यह गोला मुझे लग जाता, तो मैं न बचती । आप मेरे शव को जला देते न ?”

रघुनाथसिंह जरा तीव्र स्वर में बोला, “और मुझको लग जाता तो आप मुझको दो लकड़ी दे देतीं या नहीं ?”

मुन्दर की आँखों में आँसू आ गए ।

काँपते हुए गले से वह बोली, “मैं पहले मरूँगी । आप आज गाँठ बाँध लीजिये यदि फिर यह बात कही तो लड्डू, वड्डू कुछ नहीं खिलाऊँगी ।”

उन आँसुओं के दर्पण में रघुनाथसिंह ने अपने प्राणों की झाँकी देखी । मुन्दर आँसू पोंछ कर चली गई । रघुनाथसिंह को सारा वातावरण नवप्रस्फुटित कलियों से भरा दिखलाई पड़ा । तोप एक खिलवाड़, बारूद और गोले प्यार के खिलौने जान पड़े ।”

रघुनाथसिंह अन्त तक रानी के साथ रहे । जब रानी मर गई तब भी वे वहाँ से पीठ दिखाकर नहीं भागे । उन्होंने अपनी [illegible] भरीं, [illegible] के [illegible] और [illegible] लेकर [illegible]

मैदान पर कूद गये। 'धाँय-धाँय' बन्दूकें चलाईं। फिर एक गोली से मारे गए।

उनके चरित्र में वीरता, साहस, देश भक्ति और बलिदान के सब गुण प्रचुरता से वर्तमान हैं। वे उपन्यास के एक आदर्श पात्र के रूप में हमारे सम्मुख आते हैं।

९—दीवान जवाहरसिंह—

रघुनाथसिंह की ही कोटि के सच्चे, वीर स्वामीभक्त, देशभक्त और आज्ञापालक सेवक हैं। रानी को उन पर अगाध विश्वास है। रानी की आज्ञा से अन्त में उन्होंने रानी के पाँव छूकर कटीली की ओर प्रस्थान किया।

१०—गौस खाँ—

देशभक्त, वीर तोपची अपनी कला में बेमिसाल, वीर। यह अन्त तक रानी की ओर से लड़ते रहे। रानी के तोपखाने की शक्ति इन्हीं के हाथ में थी।

नारी पात्र—मुन्दर, सुन्दर और काशीबाई

सुन्दर—

सुन्दर रानी लक्ष्मीबाई की एक दासी है। जब यह आई थी तो अवस्था १२ वर्ष के ऊपर, शरीर छरेरा, रंग साँवला, चेहरा लम्बा, आँखें बड़ी, नाक सीधी, ललाट प्रशस्त और उजला। बड़ी होकर यह रानी की भक्त, सेविका, युद्धविद्या में निपुण, बन्दूक तोप इत्यादि के दागने में चतुर रही।

मुन्दर—

रानी की एक धीर वीर साहसी दासी। युद्ध विद्या में निपुण, सब से निपुण घुड़सवार। दीवान रघुनाथसिंह की प्रेमिका थी। इनका प्रेम विशुद्ध और सच्चा था। देश प्रेम की बलिवेदी पर बलि

काशीबाई—

युद्ध में निपुण साहसी दासी। रानी की सदा वफादार रहीं। रानी ने इन तीनों को घुड़सवारी, व्यायाम, युद्ध विद्या में पारंगत कर दिया था। स्वातन्त्र्य युद्ध में इन तीनों ने बड़ा कार्य किया था।

मोतीबाई और जुही—

राजा गंगाधर राव की नाट्यशाला में मोतीबाई और जुही दो नर्तकिएँ थीं। मोतीबाई गायन वादन में बड़ी कुशल थीं। उसका अभिनय उच्च कोटि का होता था, स्वास्थ्य और यौवन से परिपूर्ण थी। वह सुखावस्था की ओर आकृष्ट हो गई। राजा को बुरा लगा। मोतीबाई निकाल दी गई।

जुही अल्प-वयस्का नर्तकी थी। वह उन्नाव दरवाजे के भीतर सैयातीपुरा के सिरे पर रहती थी। रंगमंच पर इसका नृत्य और गायन अधिक होता था, अभिनय कम। आगे चलकर यह जासूस विभाग में मोतीबाई की नायब बनी। तात्या टोपे से इसका प्रेम हो गया था। फौजों में आकर इसने बड़ी सफलता से जासूसों का कार्य किया था। स्वातन्त्र्य युद्ध में दोनों ने अच्छा कार्य किया। यह सुन्दर, राष्ट्रभक्त, सैनिक, कुटिल राजनीतिज्ञ और कुशल अश्वारोही थी।

झलकारी—

उपन्यास की एक आदर्श चरित्र पात्री है। वह निर्भीक, वीर और पराक्रमी है। रानी से उसे अगाध स्नेह है। पूरन उसका पति है। प्राचीन संस्कारों में पत्नी होने के कारण वह उसका नाम नहीं ले पाती। आखेट का उसे शौक है। एक दिन वह गोली चला रही थी कि एक बछिया के गोली लग जाती है। बड़ी कठिनता से कोरियों ने इसका प्रायश्चित कम किया। अन्त में रानी की कृपा से पश्चाताप हुआ। जब रानी झाँसी से भाग निकली तो झलकारी ने [illegible] का कार्य किया था। [illegible]

निकल जाने पर बड़े सवेरे झलकारी घोड़े पर बैठकर जनरल रोज़ के समक्ष पहुँची और उससे कहा, "रानी को कहाँ ढूँढ़ते फिरते हो? मैं हूँ रानी, पकड़ लो मुझको।" कुछ काल के लिये अंगरेज धोखे में आ भी गये, पर बाद में बात खुली, तो उसे छोड़ दिया गया। इससे उसका अपूर्व साहस, बलिदान, रानी के प्रति प्रेम, श्रद्धा, विदेशियों से टक्कर लेने में निर्भयता और शक्ति प्रकट होती है। रानी इन्हें इतना प्रेम करती थीं कि कोरिन होते हुए भी हल्दी कुंकुं के अवसर पर इन्हें अपने अङ्क में भर लिया था।

चरित्र चित्रण की विशेषतायें

१—आदर्श चरित्रों की सृष्टि:—

इस उपन्यास के पात्रों को देख कर जो पहली बात हमारा ध्यान आकृष्ट करती है, वह इसमें मिलने वाले आदर्श चरित्र हैं। हर प्रकार का आदर्श हमें इन में मिल जाता है। मुख्य चरित्र रानी लक्ष्मीबाई का है जो एक आदर्श पत्नी, माता, राज माता, योद्धा और राजनैतिक हैं। उनमें एक ओर शरीर की शक्ति दृढ़ता, सौन्दर्य है, तो दूसरी ओर पवित्रता धर्म के प्रति अनुराग, बच्चे के प्रति वात्सल्य और अपने देश धर्म और स्वतन्त्रता के प्रति श्रद्धा। "वे, आदर्श की प्रतिमा हैं, उनमें दुर्बलता कहीं दिखाई ही नहीं पड़ती। उनके सम्पर्क में आने वाले स्त्री पुरुष अधिकतर आदर्श ही हैं।"

उदाहरण के तौर पर मोती—खुदाबख्श, पूरन—झलकारी, सुन्दर—रघुनाथसिंह, जूही तात्या आदर्श प्रेम के उदाहरण हैं। इनमें से प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में स्वदेशानुराग, देश पर बलिदान होने की भावना, त्याग, वीरता और आज्ञापालन के गुण भी भर दिये गये हैं।

नारायण शास्त्री और छोटी मेहतरानी का सम्बन्ध अनुचित है, किन्तु इस बात शास्त्री जी का बलिदान एवं छोटी की निष्ठा

त्याग, अद्भुत बलिदान की क्षमता देखते हैं, जो हमें श्रद्धा से नत-मस्तक हो जाना पड़ता है।

सेवक और सिपाही के अनेक आदर्श हमें आसानी से उपन्यास में उपलब्ध हो जाते हैं। गुलमुहम्मद जैसा वीर [illegible] पठान, गौसखाँ जैसा अनुभवी तोपची, रघुनाथसिंह और जवाहरसिंह जैसे सिपाही, और तात्या टोपे, नाना जैसे स्वामीभक्त देशप्रेमी इस उपन्यास में मिलते हैं। लेखक आदर्श के प्रति सतत प्रयत्नशील है। वह कहता है—

"अपने आदर्शों को कभी न भूलना—प्रयत्न ही पहली और पक्की सीढ़ी है।"

आदर्श चरित्रों की महत्ता प्रकट करने और उनके चरित्रों के सब पहलू चमकाने के लिये वर्मा जी ने कुछ दुर्बल चरित्रों की भी सृष्टि की है, जैसे दूल्हाजू, पीरअली इत्यादि।

स्थिर एवं गतिशील चरित्र:—

इस उपन्यास में दोनों प्रकार के चरित्रों का प्रयोग है। प्रथम वर्ग में वे पात्र हैं जो स्थिर हैं अर्थात् जिनका चरित्र एक साँचे में एक विशेष दिशा या विचार धारा में ढला हुआ है। ये बदलते नहीं। आरम्भ से अन्त तक एक से बने रहते हैं। अधिकतर इस वर्ग के वे आदर्श चरित्र हैं, जो अपने देशप्रेम, सततोद्योग, दृढ़ता और आत्मविश्वास से हमें प्रभावित करते हैं। इस वर्ग में लक्ष्मीबाई, तात्या, नाना, सुन्दर, झलकारी आते हैं।

द्वितीय वर्ग में गतिशील अर्थात विकसित होते निरंतर परिवर्तित होते हुए चरित्र हैं। डाकू सागरसिंह डाकू से कैप्टन बनता है। धीरे २ वह हमें अपनी स्वामिभक्ति और वीरता से प्रभावित कर लेता है।

दूल्हाजू पहिले रानी की ओर से मनोयोग पूर्वक युद्ध कर-

षड्यंत्र करते हैं अन्त में युद्ध के समय दुर्ग के फाटक खोल देते हैं, खुदाबख्श के वध का कारण बनते हैं।

इसी प्रकार मोतीबाई और खुदाबख्श, भी निरन्तर विकसित होते रहते हैं। प्रारंभ में उन्हें राजा गंगाधर राव निकाल देते हैं, पर अन्त में ये दोनों राज-भक्त प्रेमियों के रूप में हमारे समक्ष आते हैं।

बख्शी बख्शिनजू, पूरन झलकारी भी गतिशील हैं। झलकारी आरम्भ में एक लज्जाशीला, कमनीय, नारी के रूप में हमारे सम्मुख आती है, धीरे २ वीर युद्ध प्रेमी बनती है, शिकार की ओर उसकी प्रवृत्ति हो जाती है। अन्त में वह इतनी निर्भय बन जाती है कि रानी लक्ष्मीबाई जैसे वस्त्र पहिन कर अंग्रेज जनरल के सम्मुख पहुँच जाती है।

स्वयं रानी लक्ष्मीबाई का चरित्र भी विकसित होता चलता है। अन्त तक पहुँचते २ वे धार्मिक प्रवृत्ति की नारी, अद्वितीय राजनीतिज्ञ एवं रण-पंडिता बन जाती है। उसकी विनोदप्रियता कम हो जाती है और गम्भीरता, दार्शनिकता, दयालुता और दानशीलता बढ़ जाती हैं।

वर्मा जी ने दोनों प्रकार के चरित्रों का मनोवैज्ञानिक विकास प्रस्तुत किया है। इन पात्रों के अन्तर्द्वन्द्वों को भी स्पष्ट कर दिया गया है।

वर्ग गत और व्यक्तिगत पात्र--

वर्गगत पात्रों में उपन्यासकार का लक्ष्य सामान्य गुण चित्रित करना रहता है। पात्रों के कुछ वर्ग बनाये जा सकते हैं, और इनमें कुछ सामान्य गुण पाये जाते हैं. ये अपने वर्ग, देश, जाति का प्रतिनिधित्व करते हैं। उदाहरण स्वरूप अंगरेज पात्रों (डलहौजी, एलिस, गार्डन, मालकम, रोज इत्यादि) को ले लीजिये। इनमें चतुराई, कुटिलता, स्वार्थ सिद्धि, व्यापार कुशलता के सामान्य

चाहते हैं। भारतीय नरेशों का शोषण, अर्थ संचय, देशी राज्यों को कम्पनी के राज्य में मिलाना, ये प्रवृत्तियाँ प्रत्येक अंगरेज पात्र में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से विद्यमान हैं।

अंगरेज पात्रों को भारतवासियों से घृणा है। यह घृणा किसी न किसी रूप में उनके हृदय से निकली है। उदाहरण के लिए कुछ वाक्यांश देखिये :—

"हाँ, पहले उन्होंने कहा हमारा टीका है। धर्म की बात है फिर हमने छुड़वा दिया। डैमइट बाश। भई कितनी अहमकाना भरा मुल्क है।"

"अभी यह कौम बिल्कुल नादान और जाहिल है। अंगरेजी पढ़ने से कुछ अकल सुधरेगी। बाईबिल का पढ़ना मदरसों में इसीलिये जारी किया गया है। जब अंगरेजी का प्रचार हो जायेगा और बाईबिल की संस्कृति इनके खून में बैठ जायगी, तब धरातल कुछ ऊँचा होगा।"

"हिन्दुओं की गाँठ में शकुन्तला, कुछ वेद और कुछ ऐसा ही साहित्य है। मुसलमानों के पास कुरान, गुलिस्ताँ, बोस्ताँ और उमर खैय्याम की रुबाइयाँ। बस खतम। बाकी सब कुछ खाली रही।

"देश कुसंस्कारों से भरा हुआ है ... किसान बहुत मेहनती नहीं है ... चोर डाकुओं के मारे चैन नहीं ले पाते हैं ... रियासतों में बड़ा अन्धेर है।"

....

दूसरे वर्ग में देश भक्त पात्र आते हैं। गुल मुहम्मद, गौसखाँ, रघुनाथसिंह, जवाहरसिंह, तात्या, नाना स्वामीभक्त, देशभक्त आज्ञापालक सेवक हैं। ये अपने कर्तव्य के प्रति निरन्तर जागरूक हैं। इनमें देश प्रेम, वीरता, निष्ठा, भव्यता विद्यमान है। ये दोनों वर्गों (type) सफलता से चित्रित हुये हैं।

और प्रत्येक व्यक्ति को अपने पृथक रूप में चित्रित करता है। इस वर्ग के पात्रों में सामान्य गुण एक से होने पर भी निजी विशेषताएं अन्तर्निहित रहती हैं। इस वर्ग में रानी लक्ष्मीबाई, राव गंगाधर, अली बहादुर, झलकारी, बख्शी, मोती खुदाबख्श और तात्या आते हैं। प्रत्येक की अपनी विशेषताएं और दुर्बलताएं हैं, जिनके कारण हम उन्हें पसन्द करते या घृणा प्रदर्शित करते हैं। इनमें से कुछ पात्र अपने चरित्र गौरव के कारण हमारे स्थायी मित्र हो जाते हैं। इनमें गुलमुहम्मद और बरहानुद्दीन आदर्श व्यक्ति हैं।

चरित्र चित्रण में मनोवैज्ञानिक आधार

यों तो घटना-प्रधान उपन्यास में चरित्र विश्लेषण की गुंजायश बहुत कम रहती है, क्योंकि उपन्यासकार के पास असंख्य घटनाओं के वर्णन की समस्या रहती है। फिर भी, वर्मा जी ने लक्ष्मीबाई का चरित्र विकास मनोवैज्ञानिक आधार पर किया है। बाल्य जीवन में जिन चरित्रगत विशेषताओं का निदर्शन है, वे ही उनमें क्रम क्रम से विकसित होती दीखती हैं। स्वतन्त्र प्रेम, राजनीति शासन-संचालन, युद्धविद्या में निपुणता और बड़ी-बड़ी लड़ाइयों में नेतृत्व ये सब हमें धीरे धीरे विकसित होते दिखाये जाते हैं।

दूल्हाजू प्रेम से विरक्त होकर शत्रु बन बैठता है, उसके चरित्र के विकास में अहंभाव का विश्लेषण है। सागरसिंह का डाकू बनना फिर रानी लक्ष्मीबाई के सम्पर्क में रह कर कुशल सैनिक बनना, अलीबहादुर का चित्रण, नारायण शास्त्री-छोटी के रोमांस में मनोवैज्ञानिक आधार हैं।

नारी हृदय कोमल भावनाओं का अगाध सागर है। हल्दी कुंकूं के उत्सव पर सधवा स्त्रियाँ एक दूसरे के रोली का टीका लगाती हैं और उनको किसी न किसी बहाने अपने पति का नाम लेना पड़ता है। रानी लक्ष्मीबाई भी इस उत्सव में भाग लेती हैं। [illegible] से पति का नाम पूछने पर [illegible] लज्जा की [illegible]

हैं। लेखक ने बड़े सुन्दर रूप में चित्रित की हैं। प्रेम तत्व का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण सुन्दर बन पड़ा है। झाँसी के कलाकारों की प्रशंसा में रानी का दुर्गा को सिद्धहस्त बताना श्रोता को खटकता है। नौकरों, सैनिकों, देशवासियों, कलाकारों, नर्तकियों सभी के चरित्रों का आन्तरिक पक्ष देकर ठोस मनोवैज्ञानिक भित्तियों पर खड़ा किया गया है।

वातावरण

इस उपन्यास का सर्वाधिक आकर्षण केन्द्र इसकी ऐतिहासिक सामाजिक, सांस्कृतिक पृष्ठ भूमि है। वर्मा जी के उपन्यासों में देश काल का चित्रण बड़ा सूक्ष्म और सजीव होता है। जहाँ वे ऐतिहासिक दृष्टि से तत्कालीन सामाजिक पृष्ठभूमि चित्रित करते हैं, वहाँ गढ़, किले, नगर, प्रदेश, समीप का वातावरण, वृक्ष इत्यादि के भी ब्योरेवार वर्णन करते हैं।

ऐतिहासिक वातावरण:—

स्वयं झाँसी के निवासी होने के कारण, वर्मा जी ने झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई उपन्यास के ऐतिहासिक वातावरण को पूर्ण प्रामाणिक रखा है। इसके पीछे १४ वर्ष का पठन पाठन, ऐतिहासिक अनुसंधान और अध्ययन है। भूमिका में वर्मा जी ने अपने ऐतिहासिक अनुसन्धानों के विषय में निर्देश कर दिया है:—

“सन १९३२ में मैं इन अनुसंधानों में लगा। कलकत्ते से कुछ सामग्री मिली। १८५७ में लोगों के बयान लिये गये थे। इनको मैंने पढ़ा। इनको पढ़कर मैं अपने विश्वास में और दृढ़ हुआ—रानी 'स्वराज्य' के लिए लड़ी थीं। मैंने निश्चय किया कि उपन्यास लिखूंगा, ऐसा जो इतिहास के रंग-रेशे से सम्मत हो और उसी सन्दर्भ में हो। इतिहास के कंकाल में मांस और रक्त का संचार करने के लिये मुझको उपन्यास ही अच्छा साधन प्रतीत हुआ। उस उपन्यास को मैंने जो रूप दे पाया है, वह पाठकों के सामने है।

इस वक्तव्य से स्पष्ट हो जाता है कि ऐतिहासिक पृष्ठभूमि की सचाई के लिए उपन्यासकार प्रारंभ से जागरूक है। कथा की ऐतिहासिकता की रक्षा के लिये उन्होंने रानी लक्ष्मीबाई के संबन्ध की जो सामग्री उपलब्ध की उसका कलात्मक उपयोग किया है। जगह जगह ऐतिहासिक निर्देश (References) और परिशिष्ट में स्पष्टीकरण कर दिया है, जिससे ऐतिहासिक सत्यता प्रगट हो सके।

यह उपन्यास झाँसी के इतिहास से प्रारंभ होता है। "प्रस्तावना" भाग के १४ पृष्ठ झाँसी का इतिहास देकर तत्कालीन परिस्थितियों को स्पष्ट कर दिया है। सन् १८०४ में अंग्रेजों की पहली सन्धि और शिवराव भाऊ का शासन, उनके पुत्रों इत्यादि का संक्षेप में स्पष्टीकरण कर दिया गया है। शिवराव भाऊ झाँसी के शासक थे और वह सूबेदार कहलाते थे। पेशवाई निर्बल हो चुकी थी, सूबेदार सशक्त थे। बुन्देलखन्ड को अधिकृत करने के लिए अंग्रेजों को झाँसी के सूबेदार की मित्रता अभीष्ट थी। सन १८०४ की संधि का बुन्देलखण्ड के रजवाड़ों पर प्रभाव पड़ा। सन १८१७ में बाजीराव से अंग्रेजों की अन्तिम संधि हुई। इस संधि ने पेशवा के संपूर्ण अधिकार ईस्ट इण्डिया कम्पनी को दे दिये। उसी वर्ष शिवराव भाऊ के पौत्र रामचन्द्र राव के साथ दूसरी संधि हुई, जिसमें पेशवा का स्थानापन्न कम्पनी सरकार को मनवाया गया। सन् १८३२ में रामचन्द्रराव और उसके वारिसों को राजा की उपाधि दी गई। उस दरबार में शिवराव भाऊ के पुत्र रघुनाथ राव और गंगाधरराव भी थे। शिवरावभाऊ का जेठा पुत्र कृष्णराव था। उसका देहान्त हो चुका था। रामचन्द्र, कृष्णराव का पुत्र था। शिवराव भाऊ के जेठे पुत्र की सन्तान होने के कारण झाँसी की गद्दी उसको मिली थी।

रामचन्द्रराव को [illegible]

थीं सखूबाई के हाथ में था। जब वह वयस्क हो गया तो रामचन्द्र राव ने शासन सूत्र अपने हाथ में ले लिया। मां को यह अखरा और उसने पुत्र के वध का प्रयत्न किया पर रामचन्द्रराव बच गया। रामचन्द्रराव अपनी माँ के साथ कठोर व्यवहार नहीं करना चाहता था। परन्तु उसके दोनों काका रघुनाथसिंह और गंगाधर राव तथा दीवान सखूबाई को स्वतन्त्र नहीं छोड़ना चाहते थे। अतः वह कैद कर दी गई। रामचन्द्रराव निस्संतान मरा। फिर रघुनाथ-राव गद्दी पर बैठे। ये रंगीली प्रकृति के व्यक्ति थे। सन् १८३८ में रघुनाथराव का देहान्त हो गया। अनेक झगड़ों के उपरान्त सन् १८४३ में गंगाधरराव झांसी की गद्दी पर बैठे। सम्पूर्ण उपन्यास इनके शासनकाल तथा इनकी विधवा रानी लक्ष्मीबाई से सम्बन्धित है। लेखक ने यत्र तत्र परेख् ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि के गहरे रंगों में प्रस्तुत किया है।

जब राजा गंगाधरराव गद्दी पर बैठे, झाँसी राज्य के शासन को अंग्रेजों द्वारा चलते हुए ७-८ वर्ष हो गए थे। नगर का शासन राजा के हाथ में चला आता था। उपन्यासकार ने राजा गंगाधर-राव के व्यक्तिगत जीवन तथा झांसी के सामूहिक सामाजिक जीवन पर भी विहंगम दृष्टि डाली है। भारत के अन्य भागों के संचालन एवं शासन पर भी प्रकाश डाला गया है।

राजनैतिक स्थिति—

भारत पर अंग्रेजों का आधिपत्य क्रमशः फैलता जा रहा था। ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अधिकारी जन धीरे २ अंग्रेजों का प्रभुत्व फैलाते जा रहे थे। झाँसी पर भी उनका अधिकार था। उन दिनों झाँसी का नायब पोलिटिकल एजेण्ट कप्तान डनलप था। राजा गंगाधरराव शासन अधिकार पाने की कोशिश पहले से ही कर रहे थे। विवाह के उपरान्त उन्हें ये अधिकार प्राप्त हो गये, परन्तु [illegible] से पूर्व कम्पनी सरकार के साथ फिर [illegible]

अङ्गरेजी हुकूमत में झाँसी में एक फौज रखी जाने की शर्तें थीं। नकद खर्चा न देकर राजा गंगाधरराव ने २ लाख [illegible] हजार चार सौ अट्ठावन रुपये वार्षिक की आय राज्य लोलुप अंग्रेजों को दे दी थी। कप्तान गार्डन झाँसी स्थित अंग्रेजी सेना का एक अफसर था। वह पूरा अंग्रेज था—साहित्यिक, व्यापार कुशल स्वदेश प्रेमी, और भारतवर्ष को घृणा या अवहेलना की दृष्टि से देखने वाला। अङ्गरेजों की दृष्टि भारत से रुपया ले जाकर इङ्गलैण्ड को समृद्धि-शाली बनाने की रहती थी।

भारतीय देशी राजा विलास में डूबे हुए थे। शराब, नर्तकियों और आमोद-प्रमोद की भीड़ लगी रहती थी। उनमें फूट थी, जरा जरा सी बात पर वे परस्पर लड़ा झगड़ा करते थे। अंगरेजों का शोषण करने वाला बेलन बेतहाशा, लगातार और जोर के साथ चल रहा था। अंगरेज लोग अपनी दूकान में हिन्दुस्तान का अधूरी या अधकचरी सौदा का रूप लिए नहीं देख सकते थे। मौका मिलते ही वे छोटे मोटे रजवाड़ों को हजम कर लेते थे।

वे चाहते थे कि भारतीय ऊँचे पदों पर न पहुँचने पावें, भारतीय संस्कृति न पनपे, भारत की समृद्धि बढ़ने न पावे। जनता स्वाधीनता का नाम ले तो उसको बड़ी रियासतों के थपेड़ों से ढकेल कर चुप कर दिया जावे। बड़ी रियासत वाले जरा सा भी सिर उठावें, तो छोटी रियासतों को किसी न किसी बहाने घोंट घांट कर बड़ी रियासतों को चुप रहने का सबक सिखाया जावे। पंचायतों का नाश कर दिया। बाइबिल की शिक्षा अनिवार्य कर दी गई।

जयपुर, जोधपुर, बीकानेर इत्यादि राजपूत राज्य तटस्थ अपनी स्वतन्त्रता बनाये रखने में संलग्न मात्र रहे थे। निजाम हैदराबाद और ग्वालियर का सिन्धिया अंगरेजों को मित्र मित्र समझ कर उनके कार्यों में हस्तक्षेप न करते थे। बड़े बड़े राजा महाराजा और नवाब अपनी अपनी जनता का शोषण शौक़

अंग्रेजों का मुँह ताकने लगे थे। पुरुषार्थ शेष न रहा था। इस लि विलासिता के पोखरों में घुस पड़े थे। अंग्रेजी बंदूक और संगी उनकी पीठ पर थी। कोई भी जनता की परवाह न करता था।

अंग्रेजों ने पंजाब को परास्त करके हाल ही में अपने हा में किया था। बिहार और बंगाल में राज्य था ही। मध्यदेश अधी का रूप धारण करता चला जा रहा था। इन सबके बीच में दो बड़े रोड़े थे—एक अवध की मुसलमानी नवाबी और दूसरी झाँसी की बड़ी हिन्दू रियासत। वे चाहते थे कि किसी प्रकार इन दोनों को भी समाप्त कर स्थायी रूप से कम्पनी के राज्य में सम्मिलित कर लिया जावे।

ऐसी विषम स्थिति में झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई ने पु भारत को जाग्रत करने के लिए शंख फूँका। स्वयं वे तात्या टो नाना और अन्य स्वतन्त्रता प्रेमी महानुभावों की सहायता से स्वा तन्त्र्य योजना कार्यान्वित करती रहीं। बहुत काल तक संघर्ष चला छावनियों में अंग्रेजों के प्रति घृणा का प्रचार हुआ। १८५७ भारतीय क्रांति फैली, जिसमें अनेक स्वातन्त्र्य प्रिय व्यक्तियों ने भा लिया। सबसे महत्त्वपूर्ण भाग रानी लक्ष्मीबाई का था। यही उपन्यास में चित्रित किया गया है।

प्रारंभ से अन्त तक उपन्यासकार ने भारत की राजनैति परिस्थिति का परिचय कराया है। उसकी दृष्टि केवल झाँसी पर नहीं प्रत्युत समग्र भारत की राजनैतिक उथल पुथल संघर्ष और क्रां पर रहा है।

उपन्यासकार ने चित्रित किया है कि झाँसी की रानी लक्ष्मी बाई केवल अपनी निजी सम्पत्ति, प्रतिष्ठा या मान के लिए न लड़ी, प्रत्युत वे समस्त भारत में व्याप्त स्वाधीनता संग्राम की ने बन गई। उनकी योजना सबने एक स्वर से स्वीकार की; आजीव वे देश की आजादी और विदेशियों को निकालने के प्रयत्न में र

[illegible]

सामाजिक एवं धार्मिक स्थिति—

सामाजिक जीवन की झाँकी प्रस्तुत कर वर्मा जी ने इस उपन्यास को सजीव बना दिया है। यह राजा-रानियों या नवाबों का उपन्यास ही नहीं, साधारण जनता के दुख दर्द एवं सामाजिक स्थिति से भी सम्बन्धित है।

झाँसी में उस समय मन्त्रशास्त्री, तन्त्रशास्त्री, वैद्य, ज्योतिष इत्यादि अनेक प्रकार के विशेषज्ञ थे। शाक्त, शैव- वाममार्गी, वैष्णव, सभी काफी तादाद में रहते थे। अधिकांश वैष्णव एवं शैव थे "इस युग के संघर्ष में अनेक जातियाँ और उपजातियाँ जिनको शूद्र समझा जाता था, उन्नति की ओर अग्रसर हो रही थीं। व्यक्तिगत चरित्र का सुधार, घरेलू जीवन को अधिक शान्त और सुखी बनाना तथा जातियों की श्रेणी में ऊँचा स्थान पाना यह उस प्रगति की सहज आकांक्षा थी। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य जनेऊ पहिनते थे—यह उनकी ऊँचाई की निशानी थी। ब्राह्मण प्रायः कट्टर होते थे।

कुछ शूद्रों ने जनेऊ पहिनने आरंभ कर दिये थे। उनके इस काम में बुन्देलखण्डी और महाराष्ट्र ब्राह्मणों का समर्थन था। झाँसी नगर में ब्राह्मण काफी संख्या में थे। इन सब का बहुत बड़ा भाग इस प्रगति के विरुद्ध था। इस लिए आन्दोलन प्रायः पुराने मत के बीच में चलते रहते थे।

"समाज में सन्तुलन यथेष्ट नहीं था। असमानता, विषमता स्पष्ट थी। परन्तु आर्थिक शृंखला की कड़ियाँ मजबूती के साथ जुड़ी हुई थीं। धन इकट्ठा हो होकर बट जाता था। एक-एक आश्रित पर शत-शत आश्रित टँगे हुए थे लिप्त और संलग्न थे। आश्रय और आश्रित सब क्रिया शील। जहाँ आश्रम श्रमहीन, प्रयत्न रहित और अशील हुआ कि गया और उसका स्थान दूसरे प्रबल सबल स्थानापन्न ने ग्रहण किया। लो-कला गौरव अपनी कहानी बहुत जल्द पूरा कह ही-सा डालता था।"

रानियों को दहेज में दासियाँ मिलने की प्रथा थी। अने दासियां राजा के विलास की सामग्री बनी रहती थीं, या जीवन स्वाभाविक मार्ग पर जाकर महल से पृथक हो जाती थीं। पर्दा प्र धीरे २ टूट रही थी। मध्य वर्ग में नाचने गाने और अभिनय प्रचार था। हरदी कूँ कूँ का उत्सव बड़ी सजधज से मनाया जा था। किले में सब जातियों के व्यक्तियों को जीने की आजादी थी कोरी और कुम्हार अछूत नहीं समझे जाते थे। हिन्दू मुसलमानों एकता थी; व्यापार अच्छा चलता था। शहरों में चहल पहल म रहती थी; धन धान्य खूब था; स्त्री पुरुष सुखी दिखलाई पड़ते थे।

प्रकृति चित्रण :—

वर्मा जी ने उल्लसित प्रकृति के बड़े मर्म स्पर्शी वर्णन उपन्यास में यत्र तत्र जड़ दिये हैं। व्यक्तिगत परिचय एवं प्रकृति निकट साहचर्य होने के कारण प्रकृति के इन चित्रों में सजीवता आ गई है। राज घराने से सम्बन्धित होने के कारण इस उपन्या में प्रकृति चित्रण को वह प्रमुखता प्राप्त नहीं हो सकी है, जो "मृग नयनी" में मिली है, तथापि जहां कहीं उन्हें अवसर प्राप्त हु प्राकृतिक पृष्ठभूमि का उपयोग किया गया है। "रत्नावली" नाटि के अभिनय से पूर्व प्रकृति का मादक मोहक एक शब्द-चि देखिये:—

"चैत लग गया था। वसन्त ने पत्थरों और कंकड़ों तक फुलवाड़ियाँ पसार दीं। टेसू के फूलों ने क्षितिज को सजा दिया। धरती का रंग बिरंगे चौक पूर दिये। समीर और प्रभंजन में महक समा गई। रात और दिन संगीत से पुलकित हो उठे।"

हरदी कूँ कूँ के उत्सव के आगमन से पूर्व का प्राकृति चित्रण संक्षिप्त पर रंगीन है:—

"वसन्त आया। प्रकृति ने पुष्पाञ्जलियाँ चढ़ाई। म

छाई। लोगों को अपनी श्वास तक में परिमल का आभास हुआ। किले के महल में रानी ने चैत्र की नवरात्र में गौर की प्रतिमा की स्थापना की।" — पृष्ठ ६५

अलंकारों के रूप में कहीं २ प्रकृति का उपयोग हुआ है। जैसे—

"फूल सदा नहीं खिलते। उनमें सुगन्धि भी सदा नहीं रहती। उनकी स्मृति ही सदा मन में बसती है। नृत्य और गान की भी स्मृति सुखदायक होती है। परन्तु इन सब स्मृतियों का पोषक यह शरीर और इसके भीतर आत्मा है।"

"रानी हँस पड़ीं, जैसे संध्या के पीले बादलों में दामिनी दमक गई।"

रात्रि के वर्णन में भयानकता का सौंदर्य देखिए—

"फजरी हो चुकी थी। चाँदनी डूब चुकी थी। रात बिल्कुल अँधेरी; हवा ठण्डी और मन्द। तारे दमक रहे थे कुछ कुछ बड़े असंख्य छोटे छोटे जैसे चाँदनी चादर बिखरा कर छोड़ गई हो। नीचे सघन अंधकार सब दिशाओं में गुलाई सी बाँधे हुए। झींगुर झंकार रहे थे।" —पृष्ठ ५६

बेतवा नदी का चित्र देखिए कितना सजीव और सफल खिंचा है। इसमें उपन्यासकार का सूक्ष्म निरीक्षण दर्शनीय है। ऐसा चित्र वही खींच सकता है, जिसने तूफानी नदी को पार करने का अनुभव किया हो:—

"बेतवा की धार फूँद के ऊपर पुंज दिखाई पड़ती थी। क्रम भंग और अन्त था। जब एक क्षण में ही अनेक बार एक जल पुंज दूसरे से संघर्ष खाता और एक दूसरे से, आगे जाने का अनवरत, अथक अटूट प्रयास करता तब इतना फेनिल हो जाता कि सारी नदी में फेन ही फेन दिखलाई पड़ता था। झाग की इतनी बड़ी निरन्तर बढ़ती और उत्पन्न होती हुई राशियाँ आगे बढ़ जाती थीं।

घुड़सवारों को सामने का किनारा नहीं दिखलाई पड़ पाता था।

(देखिए पृष्ठ १८३)

"झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई" जैसे राजनैतिक उपन्यास में भी वर्मा जी ने यथा संभव उल्लासपूर्ण या परिस्थिति के अनुसार वैराग्य, पूर्ण या भयानक प्रकृति वर्णन किए हैं। इनसे वातावरण सजीव और सच्चा बन गया है. बुन्देलखण्ड के जंगल नदियें, वृक्ष और फूल सजीव हो कर हमारे सामने आ खड़े हुए हैं। सहज स्वाभाविकता और प्रमाणिकता इन वर्णनों की प्रमुख विशेषताएं हैं।

श्री "श्याम" जोशी एम० ए० के शब्दों में इन वर्णनों को हम गद्यकाव्य या चित्रकाव्य भी कह दें तो अत्युक्ति नहीं। ऐसे चित्रों के दो ही उपयोग हैं—एक तो इनसे वातावरण निर्माण में सहायता मिलती है, दूसरे वे रचना को हृदयग्राही और मधुर बना देते हैं। वर्मा जी ने इतिहास की काली रेखाओं के बीच वातावरण के सुनहरी चटकीले रंग भर कर कवित्व द्वारा उसमें प्राण प्रतिष्ठा कर दी है, जिससे उपन्यास सजीव हो उठा है।"

मुख्य समस्याएँ

"झाँसी की रानी" ऐतिहासिक उपन्यास है तथा राजनैतिक परिस्थिति का सच्चा चित्र उपस्थित कर देना उपन्यासकार का उद्देश्य है। फिर भी अप्रत्यक्ष रूप में उसने अनेक छोटी बड़ी समस्याओं की ओर निर्देश कर अपने विचार प्रकट किये हैं। वर्मा जी इस बात के लिये सतर्क रहे हैं कि कहीं विभिन्न विषयों या समस्याओं के प्रतिपादन से वे अपने उपन्यास की रोचकता एवं सजीवता नष्ट न कर दें।

(१) स्वाधीनता के लिए भारतीयों का प्रथम योजनाबद्ध संघर्ष

उपन्यास में राजनीति को महत्ता देने का तात्पर्य यह है कि वर्मा जी ने भारत निवासियों का अंग्रेजी सत्ता के विरुद्ध प्रथम [illegible] क्रान्तिकारी प्रयास प्रकट किया है। १८५७ की क्रान्ति [illegible]

इसके पीछे जनता की क्या क्या भावनाएँ थीं ? अंग्रेजों के विरुद्ध घृणा और क्रान्ति की ज्वालाएँ कैसे धीरे धीरे फैलती जा रही थीं ? हिन्दू मुस्लिम एकता का क्या हाल था ? रानी के नेतृत्व में भारतीय जनता ने कैसे आजादी लेने का प्रयत्न किया ? इन सभी तथ्यों पर प्रकाश डाला गया है। इसके साथ ही, भारत में अपना राज्य प्रचार, अर्थ संचय, धर्म का प्रचार आदि क्या-क्या बातें अँग्रेज चाहते थे, यह भी स्पष्ट किया गया है।

यह क्रान्ति क्यों असफल रही ? इस प्रश्न पर विचार करते करते वर्मा जी ने भारतीयों की पारस्परिक फूट, विलास प्रियता, असंगठन, और धार्मिक संकुचितता का भी स्पष्टीकरण कर दिया है।

(२) अंग्रेजों की योजना—

वर्मा जी ने विदेशियों के दृष्टि कोण को स्पष्ट करने का पूर्ण प्रयत्न किया है। वे हिन्दुस्तान में अपना राज्य और धर्म विस्तार करना चाहते थे। उन्हें रुपया चाहिए था। इण्डिया कम्पनी एक व्यापारिक कम्पनी थी। वह अर्थ लोलुप थी। अतः देशी राजा एवं नवाबों से अधिक से अधिक रुपया ऐंठना, उनके राज्य को अँग्रेजी राज्य में सम्मिलित करना, उनकी कूटनीति के अंग थे। उनके हृदय में भारतीयों के प्रति घृणा थी। वे यहाँ की सभ्यता संस्कृति, धर्म, साहित्य, कला, संगीत सब निकृष्ट कोटि का समझते थे। कुछ अँग्रेजों के वक्तव्य इस मनोवृत्ति के सूचक हैं :—

"डनलप—(सिपाहियों से) तुम्हारे देवी देवता सब बदसूरत और व्यर्थ हैं। उन पर विश्वास करने के कारण तुम मूर्ख बने हुए हो। इसलिए तुम्हारी तरक्की नहीं हो पाती। ईसाई होते हुए भी तुमको एक ईश्वर और उसके एक पुत्र पर ही विश्वास लाने की जरूरत है। दुनियाँ भर की डाकिनी पिशाचिनी और भूत प्रेतों से पीछा छूट जायेगा। हिन्दू मुसलमान सब बेवकूफ हो। इञ्जील पढ़ो तो आँखें खुल जायेंगी।"

सन १८५६ में ईस्ट इण्डिया कम्पनी के कर्णधार भारतव- र्ष को ईसाई बनाने का स्वप्न देखने लगे थे। अस्पृश्य चर्बी वा- कारतूसों की वास्तविकता को स्वयं कई जिम्मेदार लेखकों ने स्वीकार किया है। कम्पनी के बोर्ड के सदस्य उस स्वर्ण घड़ी की प्रतीक्षा में थे, जब समग्र हिन्दुस्तान—हिन्दू और मुसलमान अपने धर्म को छोड़कर कम्पनी के ईसाई धर्म को स्वीकार कर लेंगे। ईसाई धर्म के प्रचार के लिए काफी रकम पृथक रख दी गई थी।

दूसरी ओर अंग्रेजों के आतंक, घृणा, शोषण, साम्राज्य- लोलुपता, धार्मिक उन्माद से तंग आकर हिन्दुस्तानी लोग नाना साहब, तात्या, बहादुरशाह, अवध की बेगम जीनत महल और रानी लक्ष्मीबाई की भारत स्वाधीनता योजना को सफल बनाने में लगे थे।

अंग्रेजों ने अपनी भाषा एवं संस्कृति के व्यापक प्रचार के लिये स्कूल खोले, नौकरियों के लिये अंग्रेजी लिखने वाले क्लर्क, भारतीय मस्तिष्क में गुलामी की वृत्ति उत्पन्न की।

परोपकार की वृत्ति से प्रेरित होकर अंग्रेजों ने कानून की प्रतिष्ठा हिन्दुस्तान में नहीं की थी। वे चाहते थे कि देश में पूर्ण शान्ति हो, उनका अधिकार हमेशा बना रहे, व्यवसाय निर्बाध चलते रहें सब कार्य कानून में बाँध कर अपना अपना काम करते चले जायं। अनुशासन में शिथिलता न आने पाये। तभी अंग्रेजी राज्य निर्विघ्न चल सकता है उन लोगों ने हिन्दू-नरेशों और मुसलमानों के उत्थान-पतन के इतिहास पढ़े गुने थे इसलिये वे अपने शासन को उन सब गढ्ढों से बचाना चाहते थे, जिनमें नरेशों और बादशाहों के सूबेदार और अन्य कर्मचारी मौका पाते ही उन्हें ढकेल दिया करते थे।

३—भारतीय क्रान्ति के असफल होने के कारण—

वीर और सबल होते हुए भी विदेशियों द्वारा शासन-

हिन्दोस्तानी क्यों पराजित हुए ? वर्मा जी ने अप्रत्यक्ष रूप से इसका भी यत्र-तत्र संकेत कर दिया है। इसका मूल कारण पारस्परिक फूट और समय पर अपने समीप के राजा को उचित सहायता प्रदान न करना था। भारत का यह दुर्भाग्य रहा है कि यहाँ जब एक राजा, नवाब पर मुसीबत आई तो दूसरा उसकी सहायता करने के स्थान पर दूर बैठ कर तमाशा देखता और यह सोचता रहा कि यह सँकट उस तक न आवेगा। अकेले-अकेले रह कर हम विदेशियों द्वारा निरन्तर पराजित होते रहे हैं।

राज्य क्रान्ति में भी कई राज्य, (जैसे ग्वालियर, हैदराबाद) अँग्रेजों से मिले रहे, रुपये सेना, तथा सिपाहियों द्वारा सहायता प्रदान करते रहे। इस फूट से विपक्षियों ने एक एक कर हमें पराजित कर डाला। यदि सब मिलजुल संगठित होकर उनसे मुकाबला करते, तो अवश्य सफल होते।

विलासिता, देशी रियासतों के अत्याचार और अपनी पंचायतों का न रहना—हमारी असफलता के कारण बने। देशी राजा अपनी वासना तृप्ति में ही मस्त रहे और उनके अत्याचार बढ़ते रहे। अंग्रेजों ने हिन्दुस्तानियों के हृदय में रियासती शासन के प्रति घृणा और अपनी न्याय व्यवस्था के प्रति आकर्षण उत्पन्न किया।

स्वयं रानी की फौज में पीरअली और दूल्हाजू जैसे विश्वासघाती व्यक्ति थे, जो पराजय का कारण बने। हमारे राजा और नवाब अपने अभिमान में मस्त बने रहे।

४—जाति बिरादरी की संकुचितता—

वर्मा जी ने इस उपन्यास में जहाँ राजा गंगाधर राव के अत्याचार और क्रोध में चित्रित किये हैं, वह जाति बिरादरी की कट्टरता, संकुचितता और अत्याचारों का भी चित्रण किया है। कुछ निम्न जाति वाले जनेऊ धारण कर लेते हैं। इस पर उच्च वर्ण [illegible]

तक पहुंचता है। जाति और धर्म का झगड़ा था और राजा को इसमें हस्तक्षेप न करना चाहिये था किन्तु राजा ने दखल देने की ठानी। जनेऊ पहनने वालों ने कहा कि "ब्राह्मणों के अलावा भी अनेक जातियाँ जनेऊ पहनती हैं इसलिये उन्हें भी आज्ञा प्राप्त होनी चाहिये।" राजा ने इस न्यायोचित मांग को अनुचित समझा और दण्ड दिया गया।

उपन्यासकार ने इस अत्याचार के प्रति घृणा उत्पन्न की है। हम पढ़ते ही स्वयं जाति पाँति की कट्टरता पर क्षुब्ध हो उठते हैं। सवर्णों के निम्न वर्गों पर अत्याचार स्पष्ट हो जाते हैं। जाति पाँति ने हिन्दुओं को छोटे छोटे सहस्त्रों टुकड़ों में बाँट रखा है, जिनका खान पान और ब्याह शादी में उतना भी सम्बन्ध नहीं है जितना चिड़िया घर के पशु पक्षियों का आपस में होता है। जाति पाँति के कारण हम सदा अपनों को पराया बनाते आये हैं। देश में द्विजों ने शूद्रों के प्रति जो अत्याचार किये हैं, वे उपन्यासकार ने उभार दिये हैं।

५---अन्तर्जातीय विवाहों का पक्ष —

'मृगनयनी' तथा 'झाँसी की रानी' दोनों में अन्तर्जातीय विवाह के पक्ष में संकेत मिलते हैं। गूजर कन्या निन्नी का विवाह राजा मानसिंह से और लाखी अटल अहीर-गूजर का विवाह सम्बन्ध होता है। राजा को तो कोई कुछ नहीं कहता पर जाति वालों की हृदय हीनता और अत्याचारों के कारण अटल और लाखी गाँव छोड़ कर चले जाते हैं और बड़ी मुसीबत सहते हैं। 'झाँसी की रानी' में नारायण शास्त्री और छोटी का सम्बन्ध इसी प्रकार का है। वे जाति की कठोरता का शिकार बनते हैं, पर रहते हैं प्रसन्न और सुखी। पुरानी बातों पर अड़ना और उपयोगी नई योजना से बचना—ये राष्ट्र के लिये अहित कर हैं। जाति पाँति तोड़कर समता और बन्धुता उत्पन्न होनी चाहिये।

शैली-भाषा-रस—

इस उपन्यास का ऐसी सरल एवं प्रवाहमयी शैली में लिख गया है कि तत्कालीन कला, संस्कृति, सभ्यता, आर्थिक एवं राजनैतिक पृष्ठभूमि सभी जैसे हमारे सामने खड़ी हो जाती हैं। इतिहास के प्रति इतनी वफादारी और साथ ही सरसता, कलात्मकता और कौतूहल—ये कठिनता से एक साथ मिलते हैं।

वर्मा जी ने घटनाओं का नियोजन इस ढंग से किया है कि ऐतिहासिक पृष्ठभूमि भी हमारे मन पर स्पष्टता से अंकित हो जाता है और कहानी का भी अबाध आनन्द आता रहता है।

जहाँ इतिहास के स्थल आते हैं (जैसे पृष्ठ १०६, पृष्ठ १६७) वहाँ उपन्यासकार विस्तार से पृष्ठभूमि निर्माण में संलग्न हो जाते हैं। कथा की धारा कुछ क्षीण हो जाती है, पर ऐसे स्थल अधिक नहीं हैं। इसमें शुष्कता नहीं है। थोड़ी दूर चल कर फिर आनन्द आने लगता है। पाठक रानी के चरित्र सम्बन्धी घटनाओं में पुनः तन्मय हो जाते हैं। इतिहास की अपेक्षा इसमें उपन्यासत्व प्रचुरता से विद्यमान है।

ऐतिहासिक उपन्यासों में प्रायः लेखक कल्पना और भावना के स्पर्श से चरित्रों को तोड़ मरोड़ डालते हैं, घटनाओं का काल इत्यादि समझ में नहीं आता। वर्मा जी का यह उपन्यास इस त्रुटि से सर्वथा मुक्त है। रानी लक्ष्मीबाई, राजा गंगाधर राव, मोतीबाई, तात्या, नवाब अलीबहादुर, जूही, दुर्गा, गुलखाँ आदि सब पात्र ऐतिहासिक हैं।

वर्मा जी की भाषा सरल स्वाभाविक है। उसमें सरसता पर्याप्त मात्रा में विद्यमान है। कथोपकथन की शैली से पात्र अपने मन्तव्यों को स्पष्टता से कह सके हैं। भावों को प्रगट करने के लिए उपयुक्त शब्दों का चयन किया गया है। कहीं २ स्थानीय बुन्देलखण्डी

भाषा का बड़ा स्वाभाविक प्रयोग किया है। कहीं-कहीं अलंकारों की अपूर्व छटा है।

यह उपन्यास वीर रस से ओत प्रोत है। स्वाधीनता संग्राम की अमर सेनानी रानी लक्ष्मीबाई का नाम सुनते ही नसें फड़क उठती हैं, हृदय में साहस और वीरता का संचार हो उठता है। वर्मा जी ने भारतीय; क्रान्ति को ऐसे सुन्दर रूप में चित्रित किया है कि मन में वीर रस उत्पन्न हो उठता है, रग रग में रक्त संचार हो जाता है। वर्मा जी ने अन्त तक रानी को विदेशियों से संघर्ष करते हुए चित्रित किया है। एक तो कथानक ही वीर रस से पूर्ण, दूसरे वर्मा जी की प्रभावशाली लेखनी—वीर रस का बड़ा सफल चित्रण किया गया है। प्रारम्भ के भाग में रानी के शौर्य की झलक मिलने लगती है। उनकी व्यायाम प्रियता, घुड़सवारी, शस्त्र संचालन देखकर मन उत्साह से भर जाता है। अन्तिम भाग में युद्धों का बड़ा सजीव वर्णन है। वीर रस के आधिक्य ने अन्य रसों—शृंगार, हास्य, करुण इत्यादि को दबा लिया है। इनके छींटे मात्र कहीं कहीं दिखाई देते हैं।

शृंगार का स्पर्श कहीं कहीं किया गया है। मोतीबाई खुदाबख्श, सुन्दर-रघुनाथसिंह, जूही-तात्या आदर्श प्रेमियों के उदाहरण हैं। इन्हें लेखक ने बहुत कम स्थान दिया है। एक-एक डेढ़-डेढ़ पृष्ठ में संकेत मात्र सा कर दिया है। वह वीर रस के प्रतिपादन में ही पूर्ण तन्मय हुआ है। युद्ध प्रधान उपन्यास होने के कारण हास्य रस के भी कुछ हल्के स्पर्श मिलते हैं। वीर रस प्रधान इस उपन्यास का अन्त करुण और शान्त रसों में हुआ।

DBA000003471HIN